* श्रीहरिः *

पाराशरस्मृतिः ।

ब्राह्मणसर्वस्व मासिकपत्र सम्पादकेन
भीमसेनशर्म्मणा लोकोपकार-
मत्या देवनागरी भाषानु-
वादेन समलंकृता ।

द्वितीयवार ५०० } वि० संवत् १९७३ सन् १९१६ { ॥)

Printed and Published by Pandit Brahmadeva Sharma at the Brahma Press—Etawah.

अथ पाराशरस्मृतिप्रस्तावः।
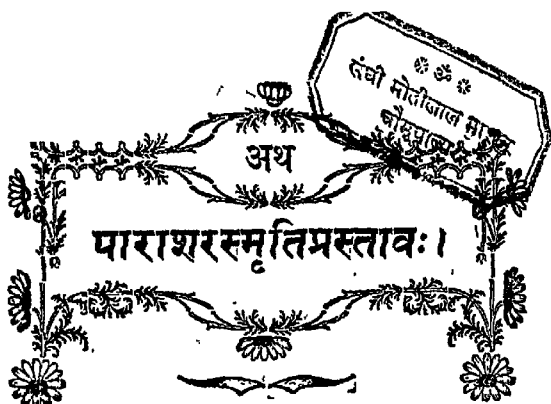
अष्टादश स्मृतियों में पाराशरस्मृति एक है, यह सब किसी को ज्ञात है। ब्रह्मप्रेस इटावा में अष्टादश स्मृतियों की एक जिल्द छप चुकी है, उस जिल्द में पराशरस्मृति भी आचुकी है। यह पराशरस्मृति दो प्रकार की है एक वृहत् द्वितीय लघु, इन दो भेदों का कारण यही प्रतीत होता है कि जिस में धर्मशास्त्र के वक्तव्य विषय का विशद रूप से वर्णन किया गया उसका नाम वृहत् वा वृद्ध पाराशर हुआ और जिसमें वही धर्म विषय संक्षेप से वर्णित हुआ उसका नाम लघु पाराशरस्मृति रक्खा गया, सो विस्तार और संक्षेप भेद से ऐसा नाम भेद अन्य भी कई स्मृतियों में हुआ है, हमने यह लघु पाराशरस्मृति यहां पृथक् इस लिये छपाई है कि-

सत्युगेमानवाधर्माः–स्त्रेतायांगौतमामताः।
द्वापरेशांखलिखिताः कलौपाराशराःस्मृताः ॥१॥

यह श्लोक पराशरस्मृति का सर्वत्र प्रसिद्ध है कि मनुस्मृति में कहे धर्म विशेष कर सत्ययुग में गौतम स्मृति के धर्म त्रेता में, शंख लिखित स्मृति के धर्म द्वापर युग में और महर्षि पराशर के कहे धर्म कलियुग में विशेष कर मान्य हैं। यद्यपि सब युगों में सब स्मृतियों के जानने पढ़ने और तदनुसार आचरण करके अपने सुधार की आवश्यकता मनुष्य मात्र को है तथापि अब वर्त्तमान कलियुग में जिन लोगों को विस्तृत धर्म शास्त्र पढ़ने देखने का अवकाश नहीं, उन को कम से कम विशेष कर कलियुग के लिये बने इस छोटे से धर्म शास्त्र को अवश्य देखना जानना चाहिये। अष्टादश स्मृतियों का मूल्य २॥) वा ३) सब लोग व्यय नहीं करसकते परन्तु इस अल्प मूल्य वाले पुस्तक को सब कोई लेसकता है। इत्यादि विचार से इस को पृथक् छपाया है। पाठकों को यह भी ध्यान रहे कि "पाराशरीय धर्म शास्त्र उत्तर खण्ड" *इस नाम से एक तीसरी भी पराशरस्मृति छपी है,* उस में केवल वैष्णव सम्प्रदाय के पञ्च संस्कारों का वर्णन है, किसी सम्प्रदाय विशेष के आचरणों का आग्रह करना स्मृतियों का विषय नहीं है, इसी कारण मन्वादि अधिक स्मृतियों में साम्प्रदायिक

विचारों का नाम मात्र भी नहीं पाया जाता, इसी कारण सर्व साधारण वर्णाश्रम धर्म प्रेमी हिन्दु समुदाय के लिये पाराशरीय धर्म शास्त्र उत्तर खण्ड की आवश्यकता हम नहीं समझते। प्रायः सभी स्मृतियों में धर्म शास्त्र का विषय एकसा है और सभी में कुछ २ विषय विशेष रूप से वर्णित है, इस पराशरस्मृति में कृषि तथा गोरक्षा का विशेष विचार है। मन्वादि स्मृतियों के मन्तव्यानुसार कृषि गोरक्षा कर्म वैश्य वर्ण के हैं, परन्तु आपत्काल में वैश्य कर्म द्वारा ब्राह्मण भी अपना निर्वाह करसकता है, ऐसा भी लेख धर्म शास्त्रों में विद्यमान है॥

यह भी विदित है कि अब कलियुग है, और इस कलियुग में विशेष कर ब्राह्मणों के लिये आपत्काल है, क्योंकि ब्राह्मण वर्ण की अपने धर्मानुकूल वेद के अध्यायनादि षट् कर्मों द्वारा जैसी जीविका प्राचीन काल में थी, इस वर्ण का जैसा आदर होता था वैसा आदर ब्राह्मण का अब नहीं रहा, पहिले राजाओं की ओर से ब्राह्मणों का आदर होता था, तब जीविका के विना ब्राह्मण दुःखी नहीं होते थे। अब यदि कोई ब्राह्मण ठीक २ शास्त्राज्ञानुसार अपना कर्त्तव्य पालन करै तो भी जीविका द्वारा उस का निर्वाह नहीं चल सकता यद्यपि ब्राह्मण लोग भी अपने कर्त्तव्य से भ्रष्ट, शास्त्रों से अनभिज्ञ होगये हैं, तथापि समयानुसार अच्छे धर्म प्रेमी ब्राह्मणों का भी अब वैसा आदर नहीं होता जैसा होना चाहिये इसी लिये [illegible] पाठनादि छोड़ के भारत के लाखों ब्राह्मण खेती करने लगे हैं। आपत्काल में खेती करता हुआ भी ब्राह्मण अपने सन्ध्या तर्पण पञ्चमहायज्ञादि धर्म का पालन कैसे कर सकता और कृषि कर्म के दोष से कैसे बच सकता है यह सब विचार महर्षि पराशर ने इस स्मृति में स्पष्ट दिखाया है। तदनुसार आचरण करने से कृषि करता हुआ भी ब्राह्मण धार्मिक रहसकता है।

श्रीगणेशायनमः ।

अथ पाराशरस्मृतिप्रारम्भः

अथातोहिमशैलाग्रे देवदारुवनालये ।
व्यासमेकाग्रमासीनमपृच्छन्नृषयःपुरा ॥ १ ॥
मानुषाणांहितंधर्मं वर्त्तमानेकलौयुगे ।
शौचाचारंयथावच्च वदसत्यवतीसुत ! ॥ २ ॥
तच्छ्रुत्वाऋषिवाक्यंतु सशिष्योऽग्न्यर्कसन्निभः ।
प्रत्युवाचमहातेजाः श्रुतिस्मृतिविशारदः ॥ ३ ॥
नचाहंसर्वतत्त्वज्ञः कथंधर्मंवदाम्यहम् ।
अस्मत्पितैवप्रष्टव्य इतिव्यासःसुतोऽवदत् ॥ ४ ॥
ततस्तेऋषयःसर्वे धर्मतत्त्वार्थकाङ्क्षिणः ।
ऋषिंव्यासंपुरस्कृत्य गतावदरिकाश्रमम् ॥ ५ ॥
नानापुष्पलताकीर्णं फलपुष्पैरलङ्कृतम् ।
नदीप्रस्रवणोपेतं पुण्यतीर्थोपशोभितम् ॥ ६ ॥

देवदारु वृक्षों के वन में हिमालय पर्वत के ऊपर एकाग्र चित्त से बैठे हुए व्यास जी से पूर्वकाल में ऋषियों ने पूछा ॥ १ ॥ हे सत्यवती के पुत्र व्यासजी ! वर्तमान कलियुग में मनुष्यों का हितकारी धर्म शौच और आचार हम से कहो ॥ २ ॥ उक्त ऋषियोंके वाक्य को सुनकर शिष्यों सहित अग्नि और सूर्यके तुल्य बड़े तेज वाले श्रुति और स्मृतिमें चतुर व्यासजी ऋषियोंके प्रति बोले ॥३॥ कि हम सब तत्त्वोंको नहीं जानते [यह कथन पिता पराशर की प्रशंसार्थ है] तब कैसे धर्म को कहें। हमारे पिता को ही यह विषय पूंछो यह पराशर के पुत्र व्यास ने कहा ॥४॥ तिसके अनन्तर धर्म के तत्त्व को जानना चाहते हुए वे सब ऋषि लोग व्यास ऋषि को आगे लेकर बदरिकाश्रम (बद्रीनारायण) को गये ॥ ५ ॥ जो अनेक प्रकार के पुष्प लताओं से युक्त फल फूलों से शोभायमान, नदियों तथा झरनों से युक्त, पवित्र तीर्थों से जिसकी शोभा

मृगपक्षिनिनादाढ्यं देवतायतनावृतम् ।
यक्षगन्धर्वसिद्धैश्च नृत्यगीतैरलङ्कृतम् ॥ ७ ॥
तस्मिन्नृषिसभामध्ये शक्तिपुत्रंपराशरम् ।
सुखासीनंमहातेजा मुनिमुख्यगणावृतम् ॥ ८ ॥
कृताञ्जलिपुटोभूत्वा व्यासस्तुऋषिभिःसह ।
प्रदक्षिणाभिवादैश्च स्तुतिभिःसमपूजयत् ॥ ९ ॥
अथसन्तुष्टहृदयः पराशरमहामुनिः ।
आहसुस्वागतंब्रूहीत्यासीनोमुनिपुंगवः ॥ १० ॥
कुशलंसम्यगित्युक्त्वा व्यासःपृच्छत्यनन्तरम् ।
यदिजानासिमेभक्तिं स्नेहाद्वाभक्तवत्सल! ॥ ११ ॥
धर्मंकथयमेतात ! अनुग्राह्योह्यहंतव ।
श्रुतामेमानवाधर्मा वासिष्ठाःकाश्यपास्तथा ॥ १२ ॥
गार्गीयागौतमीयाश्च तथाचौशनसाःस्मृताः ।
अत्रेर्विष्णोश्चसांवर्ता दाक्षाआङ्गिरसास्तथा ॥ १३ ॥

है ॥ ६ ॥ मृग तथा पक्षियों के सुहावने शब्दों से युक्त. जिस में देवालय विद्यमान हैं, और जो यक्ष, गन्धर्व सिद्ध, तथा अप्सरादि के नृत्य और गीतों से शोभा युक्तहै ॥७॥ ऐसे बदरिकाश्रम में ऋषियों की सभा के बीच सुखपूर्वक बैठे तथा बड़े २ नामी अनेक मुनीश्वर जिन के चारों ओर बैठे हैं ऐसे शक्ति के पुत्र पराशर का ॥ ८ ॥ ऋषियों सहित बड़े तेजस्वी व्यास जी ने हाथ जोड़ कर परिक्रमा अभिवादन और स्तुतियों से पूजन किया ॥ ९ ॥ इसके अनन्तर मन से संतुष्ट हुए मुनियों में उत्तम पराशर महामुनि व्यास जी से बोले कि तुम भलीप्रकार अपना स्वागत (आनन्द से आना) कहो ॥ १० ॥ तब व्यास जी ने कुशल पूर्वक स्वागमन कह कर पीछे यह पूछा कि हे भक्तवत्सल ! जो आप मेरी भक्तिको जानते हो तिससे वा स्नेह से ॥११॥ हे पितः मुझसे धर्म कहिये क्योंकि मैं आपके अनुग्रह करने योग्य हूं—मैंने मनु, वसिष्ठ, कश्यप, ॥ १२ ॥ गर्ग, गौतम, उशना, अत्रि, विष्णु, संवर्त, दक्ष, अंगिरा, ॥ १३ ॥

शातातपाश्चहारीता याज्ञवल्क्यकृताश्चये ।
आपस्तम्बकृताधर्माः शंखस्यलिखितस्यच ॥ १४ ॥
कात्यायनकृताश्चैव तथाप्राचेतसान्मुनेः ।
श्रुताह्येतेभवत्प्रोक्ताः श्रौतार्थामेनविस्मृताः ॥ १५ ॥
अस्मिन्मन्वन्तरेधर्माः कृतत्रेतादिकेयुगे ।
सर्वेधर्माःकृतेजाताः सर्वेनष्टाःकलौयुगे ॥ १६ ॥
चातुर्वर्ण्यसमाचारं किंचित्साधारणंवद ।
चतुर्णामपिवर्णानां कर्त्तव्यंधर्मकोविदैः ॥ १७ ॥
ब्रूहिधर्मस्वरूपज्ञ सूक्ष्मंस्थूलञ्चविस्तरात् ।
व्यासवाक्यावसानेतु मुनिमुख्यःपराशरः ॥ १८ ॥
धर्मस्यनिर्णयंप्राह सूक्ष्मंस्थूलञ्चविस्तरात् ।
शृणुपुत्रप्रवक्ष्यामि शृण्वन्तुमुनयस्तथा ॥ १९ ॥
कल्पेकल्पे क्षयोत्पत्तौ ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ।
श्रुतिस्मृतिसदाचार-निर्णेतारश्चसर्वदा ॥ २० ॥

शातातप, हारीत, याज्ञवल्क्य आपस्तम्ब शंख, लिखित, ॥ १४ ॥ कात्यायन प्रचेता इन सब ऋषि मुनियों के कहे बनाये धर्मशास्त्र मैंने सुने हैं तथा आप के कहे वेद के अर्थ भी हम ने सुने और उन को हम भूले भी नहीं हैं ॥ १५ ॥ इस मन्वन्तर तथा कृत त्रेता आदि युगों में जो धर्म किये गये थे वे सब कलियुग में नष्ट हो गये ॥ १६ ॥ धर्मका मर्म जानने वालों के लिये जो चारों वर्णों को कर्त्तव्य है वह चारों वर्णों का किंचित्साधारण आचार कहिये ॥१७॥ हे धर्म के स्वरूप को जानने वाले! सूक्ष्म और स्थूल आचार को विस्तार से कहिये। इस प्रकार व्यास जी के वचनों के पूर्ण होने पर मुनियों में मुख्य पराशरजी ने ॥१८॥ सूक्ष्म और स्थूल धर्म का निर्णय विस्तार से कहा हे पुत्र! व्यास जी। तथा अन्य मुनियों! तुम सुनो॥१९॥ कल्प २ में प्रलय तथा सृष्टि होनेपर ब्रह्मा विष्णु और शिव ये तीनों श्रुति, स्मृति, और सदाचार के निर्णय करने वाले हैं। ॥ २० ॥ परन्तु

नकश्चिद्वेदकर्त्ता च वेदस्मर्त्ता चतुर्मुखः ।
तथैव धर्मान्स्मरति मनुः कल्पान्तरान्तरे ॥ २१ ॥
अन्ये कृतयुगे धर्मा स्त्रेतायां द्वापरे परे ।
अन्ये कलियुगे नृणां युगरूपाऽनुसारतः ॥ २२ ॥
तपः परं कृतयुगे त्रेतायां ज्ञानमुच्यते ।
द्वापरे यज्ञमेवाहु-र्दानमेकं कलौ युगे ॥ २३ ॥
कृते तु मानवा धर्मा स्त्रेतायां गौतमाः स्मृताः ।
द्वापरे शंखलिखिताः कलौ पाराशराः स्मृताः ॥ २४ ॥
त्यजेद्देशं कृतयुगे त्रेतायां ग्राममुत्सृजेत् ।
द्वापरे कुलमेकन्तु कर्त्तारं तु कलौ युगे ॥ २५ ॥
कृते संभाषणादेव त्रेतायां स्पर्शनेन च ।
द्वापरे त्वन्नमादाय कलौ पतति कर्मणा ॥ २६ ॥

वेद का बनाने वाला कोई नहीं है (इसी से वेद अपौरुषेय कहाता है) किन्तु चतुर्मुख ब्रह्मा जी पूर्व कल्प के अभ्यास किये वेद का सर्गारम्भ में स्मरण करने वाले हैं उसी प्रकार मनु जी कल्प २ में तथा प्रत्येक मन्वन्तर में धर्मों का स्मरण करते हैं। ॥ २१ ॥ सत्ययुग, त्रेता, और द्वापर तथा कलियुग में देशकाल और पात्रोंमें शक्ति भेदानुसार मनुष्य का धर्म भिन्न २ हो जाता बदलता रहता है ॥ २२ ॥ सत्ययुग में तप, त्रेता में ज्ञान, द्वापर में यज्ञ और कलियुग में एक दान को ही मुख्य कहते हैं (इसी बात को चाहें यों कहो वा मानो कि तप ज्ञान यज्ञ और दान ये धर्म के चार पग हैं उन में से सद्युगी तप को, त्रेतायुगी ज्ञान को, द्वापरयुगी यज्ञ को और कलियुगी धर्मात्मा दानको मुख्य कर्त्तव्य मानते हैं) ॥२३॥ सत्ययुगमें मनु के कहे त्रेता में गौतम के कहे धर्म विशेष कर चल सकते हैं द्वापर में शंख और लिखित के तथा कलियुग में पराशर के कहे धर्म मानने उचित हैं ॥ २४ ॥ सत्ययुग में धर्म हीन देश को और त्रेता में धर्म विरोधी ग्राम को द्वापर में धर्म विरोधी कुल को और कलियुग में अधर्म करने वाले मनुष्य को त्याग दे ॥२५॥ सत्ययुग में अधर्मी के साथ संभाषण करनेसे, त्रेतामें उसके स्पर्शकरनेसे द्वापर में अन्न लेकर और कलियुग में कर्म करने से पतित होता है ॥ २६ ॥ सत्ययुग में उसी समय और त्रेता में दशदिन

कृतेतात्क्षणिकःशापस्त्रेतायांदशभिर्दिनैः ।
द्वापरेचैकमासेन कलौसंवत्सरेणतु ॥ २७ ॥
अभिगम्यकृतेदानं त्रेतास्वाहूयदीयते ।
द्वापरेयाचमानाय सेवयादीयतेकलौ ॥ २८ ॥
अभिगम्योत्तमंदानमाहूयैवतुमध्यमम् ।
अधमंयाचयमानंस्यात् सेवादानन्तुनिष्फलम् ॥ २९ ॥
जितोधर्मोह्यधर्मेण सत्यंचैवानृतेनच ।
जिताश्चोरैश्चराजानः स्त्रीभिश्चपुरुषाजिताः ॥ ३० ॥
सीदन्तिचाऽग्निहोत्राणि गुरुपूजाप्रणश्यति ।
कुमार्यश्चप्रसूयन्ते तस्मिन्कलियुगेसदा ॥ ३१ ॥
कृतेत्वस्थिगताःप्राणास्त्रेतायांमांससमाश्रिताः ।
द्वापरेरुधिरंयावत कलौत्वन्नादिषुस्थिताः ॥ ३२ ॥
युगेयुगेचयेधर्मास्तत्रतत्रचयेद्विजाः ।
तेषांनिन्दानकर्त्तव्या युगरूपाहितेद्विजाः ॥ ३३ ॥

में शाप लगता द्वापर में एक महीने में और कलियुग में एक वर्ष में शाप लगता है ॥ २७ ॥ सतयुग में ब्राह्मण के समीप जाकर त्रेता में ब्राह्मण को अपने घर पर बुलाकर द्वापर में मांगने पर और कलियुग में जो सेवा करै उसे दान देते हैं अर्थात् दान के ये चार दर्जे हैं ॥ २८ ॥ [श्लोक ३२ तक सब कथन अनुवाद है विधि नहीं] ब्राह्मण के समीप जाकर दान देना सद्युगी सर्वोत्तम है और बुलाकर जो दिया वह मध्यम मांगने वाले को जो दिया वह अधम और सेवक को जो दिया वह निष्फल है ॥ २९ ॥ कलियुग में अधर्म से धर्म, झूठ से सत्य चोरों से राजा और स्त्रियों से पुरुष जीत लिये जाते अर्थात् दब जाते हैं ॥ ३० ॥ अग्निहोत्र बन्द हो जाते गुरु पूजा नष्ट हो जाती है कुमारी कन्याओं के सन्तान होते ये काम सदैव प्रत्येक कलियुग में होते हैं ॥ ३१ ॥ सत्युग में प्राण हाड़ों में रहते त्रेता में मांस में द्वापर में रुधिर में और कलियुग में अन्न आदि में रहते हैं ॥ ३२ ॥ जिस २ युग में जो २ धर्म होते हैं और उस २ युग में जो ब्राह्मण हैं उनकी निन्दा न करनी चाहिये क्योंकि

युगेयुगेतुसामर्थ्यं शेषंमुनिविभाषितम् ।
पराशरेणचाप्युक्तं प्रायश्चित्तंविधीयते ॥ ३४ ॥
अहमद्यैवतत्सर्वमनुस्मृत्यब्रवीमिवः ।
चातुर्वर्ण्यसमाचारं शृण्वन्तुऋषिपुङ्गवाः ॥ ३५ ॥
पराशरमतंपुण्यं पवित्रंपापनाशनम् ।
चिन्तितंब्राह्मणार्थाय धर्मसंस्थापनायच ॥ ३६ ॥
चतुर्णामपिवर्णाना-माचारोधर्मपालकः ।
आचारभ्रष्टदेहानां भवेद्धर्मःपराङ्मुखः ॥ ३७ ॥
षट्कर्माभिरतोनित्यं देवतातिथिपूजकः ।
हुतशेषन्तुभुञ्जानो ब्राह्मणोनावसीदति ॥ ३८ ॥
स्नानंसन्ध्याजपोहोमो स्वाध्यायोदेवतार्चनम् ।
आतिथ्यंवैश्वदेवंच षट्कर्माणिदिनेदिने ॥ ३९ ॥
प्रियोवायदिवाद्वेष्यो मूर्खःपण्डितएववा ।
संप्राप्तोवैश्वदेवान्ते सोऽतिथिःस्वर्गसंक्रमः ॥ ४० ॥

वे युग के अनुसारी हैं ॥३३॥ भिन्न २ युगों में जो सामर्थ्य मुनियों ने कहा है और पराशर जी ने भी जो कहा है उसके अनुसार प्रायश्चित्त का विधान किया जाता है ॥ ३४ ॥ उस सबको अभी स्मरण करके हम कहते हैं हे ऋषियोंमें उत्तम पुरुषो! चारों वर्णों का आचरण सुनो ॥३५॥ क्योंकि पराशर का मत पुण्यका उत्पादक पवित्र तथा पापों का नाशक है जो मत ब्राह्मणों के लिये तथा धर्म की स्थिति के लिये विचारा है ॥ ३६ ॥ चारों वर्णों का जो आचार है वही धर्म का रक्षक जानो जिन का देह आचार से भ्रष्ट है उन से धर्म भी पराङ्मुख होता पीठ फेर लेता है ॥ ३७ ॥ जो छः कर्मों में नित्य तत्पर है तथा देवता और अतिथि का पूजन करता है और जो होम करके शेष बचे अन्नको खाता है वह ब्राह्मण दुःखी नहीं होता ॥३८॥ स्नान सन्ध्या जप होम २ विधि पूर्वक वेदाध्ययन ३ और देवप्रतिमाओं का पूजन अतिथिकी सेवा ४ तथा वैश्वदेव इनषट् कर्मों को प्रतिदिन करे। सन्ध्या स्नान जप ये तीनों अङ्गाङ्गिरूप से एक हैं ॥ ३९ ॥ प्यारा हो वा शत्रु मूर्ख हो वा पण्डित जो वैश्वदेव के अन्त में प्राप्त हो वह अतिथि स्वर्ग में पहुंचाने वाला है ॥ ४० ॥ जो दूर से आया हो

दूराच्चोपगतंश्रान्तं वैश्वदेवउपस्थितम् ॥
अतिथिंतंविजानीयान्नातिथिःपूर्वमागतः ॥ ४१ ॥
नैकग्रामीणमतिथिं विप्रंसाङ्गतिकंतथा ।
अनित्यंह्यागतोयस्मात्तस्मादतिथिरुच्यते ॥ ४२ ॥
अतिथिंतत्रसंप्राप्तं पूजयेत्स्वागतादिना ।
तथासनप्रदानेन पादप्रक्षालनेनच ॥ ४३ ॥
श्रद्धयाचान्नदानेन प्रियप्रश्नोत्तरेणच ।
गच्छतश्चानुयानेन प्रीतिमुत्पादयेद्गृही ॥ ४४ ॥
अतिथिर्यस्यभग्नाशो गृहात्प्रतिनिवर्त्तते ।
पितरस्तस्यनाश्नन्ति दशवर्षाणिपञ्चच ॥ ४५ ॥
काष्ठभारसहस्रेण घृतकुम्भशतेनच ।
अतिथिर्यस्यभग्नाशस्तस्यहोमोनिरर्थकः ॥ ४६ ॥
सुक्षेत्रेवापयेद्वीजं सुपात्रेनिःक्षिपेद्धनम् ।
सुक्षेत्रेचसुपात्रेच ह्युप्तंदत्तंनश्यति ॥ ४७ ॥
नपृच्छेद्गोत्रचरणे नस्वाऽध्यायंश्रुतंतथा ।
हृदयेकल्पयेद्देवं सर्वदेवमयोहिसः ॥ ४८ ॥

थक गया हो वैश्वदेव के समय उपस्थित हो उस को अतिथि जाने पहिले आचुके वा ठहरे हुए को नहीं ॥ ४१ ॥ एक गांवमें रहने वाले ब्राह्मण को तथा मेली ब्राह्मण को अतिथि कभी न माने क्योंकि नित्य जो न आवे उसे ही अतिथि कहा जाता है॥४२॥ उस समय (वैश्वदेव में) आये अतिथि का (स्वागत) आदि से पूजन करे । तथा वैसे ही आसन देने पग धोने ॥ ४३ ॥ श्रद्धा से अन्न देने प्रिय तथा मधुर प्रश्न और उत्तरों से जाते के पीछे चलने से गृहस्थी पुरुष अतिथि को प्रसन्न करै ॥ ४४ ॥ जिस के घर से निराश होकर अतिथि चला जाता है उस के यहां पितर पन्द्रह वर्ष तक नहीं खाते ॥ ४५ ॥ काष्ठ के हजार बोझों से घी के सौ घड़ों से भी उसका होम वृथा है जिस के यहां से अतिथि निराश होकर लौट जाता है ॥ ४६ ॥ अच्छे खेत में बीज बोवे और सुपात्र को धन देवे क्योंकि अच्छे खेत में बोया बीज तथा सुपात्र को दिया दान नष्ट नहीं होता ॥४७॥ गोत्र वा चरण (नाम कठ कौथुमादि) ब्रह्मयज्ञ और वेदाध्ययन इनको भी न पूछे अपने हृदय में अतिथि को देवता समझे क्योंकि अतिथि सब देवताओं का रूप है ॥ ४८ ॥

अपूर्वःसुव्रतीविप्रो ह्यपूर्वश्चातिथिस्तथा ।
वेदाभ्यासरतोनित्यं त्रयोऽपूर्वादिनेदिने ॥ ४९ ॥
वैश्वदेवेतुसंप्राप्ते भिक्षुकेगृहमागते ।
उद्धृत्यवैश्वदेवार्थं भिक्षांदत्वाविसर्जयेत् ॥ ५० ॥
यतिश्चब्रह्मचारीच पक्वान्नस्वामिनावुभौ ।
तयोरन्नमदत्वाच भुक्त्वाचान्द्रायणंचरेत् ॥ ५१ ॥
दद्याच्चभिक्षात्रितयं परिव्राट्ब्रह्मचारिणाम् ।
इच्छयाचततोदद्याद्विभवेसत्यवारितम् ॥ ५२ ॥
यतिहस्तेजलंदद्याद् भैक्षंदद्यात्पुनर्जलम् ।
तद्भैक्षंमेरुणातुल्यं तज्जलंसागरोपमम् ॥ ५३ ॥
यस्यछत्रंहयश्चैव कुञ्जरारोहमृद्धिमत् ।
ऐन्द्रंस्थानमुपासीत तस्मात्तंनविचारयेत् ॥ ५४ ॥
वैश्वदेवकृतंपापं शक्तोभिक्षुर्व्यपोहितुम् ।
नहिभिक्षुकृतंदोषं वैश्वदेवोव्यपोहति ॥ ५५ ॥

अच्छे व्रत नियम वाला ब्राह्मण-और ऐसा ही अतिथि और नित्य २ वेद का पढ़ने वाला ये तीनों प्रतिदिन भी अपूर्व (नवीन) ही समझे जाते हैं ॥ ४६ ॥ वैश्वदेव के समय यदि भिक्षुक घर में आवे तो वैश्वदेव के लिये पृथक् अन्न निकाल कर भिक्षा देके विदा करै ॥ ५० ॥ यति संन्यासी और ब्रह्मचारी ये दोनों पक्के अन्न के अधिकारी हैं उन दोनों को विना अन्न दिये जो भोजन करै वह चांद्रायण व्रत का प्रायश्चित्ती होता है ॥ ५१ ॥ संन्यासी और ब्रह्मचारियों को तीन खुराक तक भिक्षा देवे यदि धन होय तो अपनी इच्छा से और भी देवे ॥ ५२ ॥ पहिले संन्यासी के हाथ में जल दे फिर अन्न दे पीछे भोजनान्त में फिर जल देवे वह भिक्षा मेरु पर्वत के और वह जल समुद्र के समान दान है ॥५३॥ जिस विरक्त संन्यासी को दिव्य हाथी घोड़ा छत्रादि स्वर्गीय देवराज इन्द्र की संपत्ति अपने कर्मानुसार प्राप्त होसकती है इस कारण भिक्षु अतिथि की परीक्षा का विचार न करै ॥ ५४ ॥ संन्यासी का सत्कार अवश्य करै वैश्वदेव के भूल जाने के दोष को भिक्षु दूर कर सकता है पर भिक्षु के लौट जाने से हुए पाप को वैश्वदेव दूर नहीं कर सकता ॥ ५५ ॥

अकृत्वावैश्वदेवंतु भुञ्जतेयेद्विजाधमाः ।
सर्वेतेनिष्फलाज्ञेयाः पतन्तिनरकेऽशुचौ ॥ ५६ ॥
वैश्वदेवविहीनाये आतिथ्येनबहिष्कृताः ।
सर्वेतेनरकंयान्ति काकयोनिंव्रजन्तिच ॥ ५७ ॥
शिरोवेष्ट्यतुयोभुङ्क्ते दक्षिणाभिमुखस्तुयः ।
वामपादेकरंन्यस्य तद्वैरक्षांसिभुञ्जते ॥ ५८ ॥
यतयेकाञ्चनंदत्वा ताम्बूलंब्रह्मचारिणे ।
चोरेभ्योप्यभयंदत्वा दातापिनरकंव्रजेत् ॥ ५९ ॥
शुक्लवस्त्रंचयानंच ताम्बूलंधातुमेवच ।
प्रतिगृह्यकुलंहन्यात्प्रतिगृह्णातियस्यच ॥ ६० ॥
चोरोवायदिचाण्डालः शत्रुर्वापितृघातकः ।
वैश्वदेवेतुसंप्राप्ते सोऽतिथिःस्वर्गसंक्रमः ॥ ६१ ॥
नगृह्णातितुयोविप्रो ह्यतिथिंवेदपारगम् ।
अदत्वान्नमात्रन्तु भुक्त्वाभुङ्क्तेतुकिल्बिषम् ॥ ६२ ॥

जो द्विजों में नीच पुरुष वैश्वदेव कर्म किये विना भोजन करते हैं उन का सब जीवन निष्फल है और वे अशुद्ध नरक में पड़ते हैं ॥ ५६ ॥ जो वैश्वदेव से रहित हुए अतिथि का सत्कार नहीं करते वे सब नरक में जाते हैं तदनन्तर कौवे की योनि को प्राप्त होते हैं ॥ ५७ ॥ जो मनुष्य शिर में पगड़ी आदि बांध कर वा दक्षिण को मुख करके भोजन करता है तथा बांये पग पर हाथ रख कर खाता है उस अन्न को राक्षस खा जाते हैं अर्थात् भोजन का यह राक्षसी प्रकार है ॥ ५८ ॥ संन्यासी को सुवर्ण ब्रह्मचारियों को पान और चोरों को अभय दान देकर दाता भी नरक में जाता है ॥ ५९ ॥ सफेद वस्त्र, सवारी, पान, और धातु इनका दान लेने वाला यति अपने और दाता के कुल का नाश करता है ॥ ६० ॥ चोर हो वा चाण्डाल हो और चाहे पिता को मारने वाला शत्रु भी हो परन्तु वैश्वदेव के समय आया हो तो वह अतिथि स्वर्ग में ले जाने वाला है ॥ ६१ ॥ जो ब्राह्मण वेद का पार जानने वाले अतिथि का नहीं ग्रहण करता अर्थात ऐसे अतिथि का पूजन नहीं करता वह अतिथि को नहीं दिये अन्न रूप में पाप का भागी होता है ॥ ६२ ॥

ब्राह्मणस्यमुखंक्षेत्रं सर्वोत्तममकण्टकम् ।
वापयेत्सर्वबीजानि साकृषिःसार्वकामिका ॥ ६३ ॥
सुक्षेत्रेवापयेद्बीजं सुपात्रेनिःक्षिपेद्धनम् ।
सुक्षेत्रेचसुपात्रेच ह्युप्तंदत्तन्ननश्यति ॥ ६४ ॥
अव्रताह्यनधीयाना यत्रभैक्षचराद्विजाः ।
तंग्रामंदण्डयेद्राजा चौरभक्तप्रदोहिसः ॥ ६५ ॥
क्षत्रियोहिप्रजारक्षन् शस्त्रपाणि प्रदण्डवान् ।
निर्जित्यपरसैन्यानि क्षितिंधर्मेणपालयेत् ॥ ६६ ॥
नश्रीःकुलक्रमायाता भूषणोल्लिखिताऽपिवा ।
खड्गेनाक्रम्यभुञ्जीत वीरभोग्यांवसुन्धराम् ॥ ६७ ॥
पुष्पंपुष्पंविचिन्वीत मूलच्छेदंनकारयेत् ।
मालाकारइवाऽरामे नयथाङ्गारकारकः ॥ ६८ ॥
लाभकर्मतथारत्नं गवांचपरिपालनम् ।
कृषिकर्मचवाणिज्यं वैश्यवृत्तिरुदाहृता ॥ ६९ ॥

ब्राह्मण का मुख कांटे रहित और जल विहीन सर्वोत्तम खेत है उसी में सब बीज बोवे क्योंकि यही खेती सब कामनाओं के देने वाली है ॥ ६३ ॥ अच्छे खेत में बीज बोवे और सुपात्र को धन देवे। अच्छे खेत में बोया अन्न और सुपात्र को दिया धन नष्ट नहीं होता ॥ ६४ ॥ जिस ग्राम में व्रतों को न करते और वेद को न पढ़े हुए ब्राह्मण भिक्षा मांगते हैं उस ग्राम को राजा दण्ड दे क्योंकि वह ग्राम चौरों को भाग देता है ॥ ६५ ॥ दण्डनीत्यनुसार शस्त्र को हाथ में लिये प्रजा की रक्षा करता हुआ क्षत्रिय शत्रुओं की सेनाओं को जीत कर धर्मानुकूल पृथ्वी की पालना करै ॥ ६६ ॥ क्योंकि लक्ष्मी कुछ कुल परम्परा से नहीं आती और भूषणों से भी नहीं जानी जाती किन्तु अपने शस्त्रबल से शत्रुओं को जीत कर पृथ्वी को भोगे क्योंकि पृथ्वी शूरवीरों के भोगने योग्य है ॥ ६७ ॥ राजा को चाहिये कि जैसे माली बगीचे के वृक्षों की रक्षा रखता हुआ फूल २ तोड़ लेता है किन्तु मूलोच्छेद नहीं करता वैसे ही प्रजा की रक्षा करता हुआ राजा उस से धनादि लिया करे किन्तु कोइला बनाने वाला जैसे जड़ से वृक्षों को काट डालता है वैसे प्रजा की जड़ न बिगाड़े ॥ ६८ ॥ लाभ का काम, रत्नादि की परीक्षा तथा बेंचना गौओं की अच्छी रक्षा, खेती करना व्यापार ये वैश्य की वृत्ति (जीविका) कही हैं ॥ ६९ ॥

शूद्राणांद्विजशुश्रूषा परमोधर्मउच्यते ।
अन्यथाकुरुतेकिञ्चित्तद्भवेत्तस्यनिष्फलम् ॥ ७० ॥
लवणंमधुतैलञ्च दधितक्रंघृतंपयः ।
नदुष्येच्छूद्रजातीनां कुर्यात्सर्वेषुविक्रयम् ॥ ७१ ॥
विक्रीणन्मद्यमांसानि ह्यभक्ष्यस्यचभक्षणम् ।
कुर्वन्नगम्यागमनं शूद्रःपततितत्क्षणात् ॥ ७२ ॥
कपिलाक्षीरपानेन ब्राह्मणीगमनेनच ।
वेदाक्षरविचारेण शूद्रस्यनरकंध्रुवम् ॥ ७३ ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

अतःपरंगृहस्थस्य धर्माचारंकलौयुगे ।
धर्मसाधारणंशक्यं चातुर्वर्ण्याश्रमागतम् ॥ १ ॥
संप्रवक्ष्याम्यहंपूर्वं पाराशरवचोयथा ।
षट्कर्मसहितोविप्रः कृषिकर्माणिकारयेत् ॥ २ ॥

और शूद्रों का परम धर्म द्विजों की सेवा करना कहा है। इस मुख्य कर्त्तव्य को सर्वथा छोड़ जो कुछ धर्म सम्बन्धी कृत्य शूद्र करता है तो वह उस का निष्फल है ॥७०॥ लवण, मधु(शहद) तेल, दही, मठा, घी और दूध ये शूद्रों के स्पर्श किये दूषित नहीं हैं इनको शूद्र सब जातियोंमें बेंचे ॥७१॥ मदिरा और मांसको बेंचता, अभक्ष्यका भक्षण करता और गमन करनेके अयोग्य ब्राह्मणी आदि स्त्री के संग गमन करता हुआ शूद्र उसी क्षण में पतित हो जाता है ॥७२॥ कपिला गौ का दूध पीने ब्राह्मणी के संग गमन करने, और वेद के अक्षरों का विचार करने से शूद्र को निश्चय नरक होता है ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे १ अध्यायः ॥

इस के अनन्तर कलियुग में गृहस्थ का धर्म आचार और चारों वर्णों तथा आश्रमों का यथाशक्ति साधारण धर्म जो है ॥ १ ॥ उसको हम पहिले पराशर के वचनानुसार कहेंगे। छः कर्मों सहित ब्राह्मण खेती के काम भी करावे ॥ २ ॥ ऐसे बैल को न जुते-

क्षुधितंतृषितंश्रान्तं बलीवर्द्दंनयोजयेत् ।
हीनाङ्गंव्याधितंक्लीबं वृषंविप्रोनवाहयेत् ॥ ३ ॥
स्थिराङ्गंनीरुजंदृप्तं सुनर्द्दंषण्ढवर्जितम् ।
वाहयेद्दिवसस्यार्द्धं पश्चात्स्नानंसमाचरेत् ॥ ४ ॥
जपंदेवार्चनंहोमं स्वाध्यायंसाङ्गमभ्यसेत् ।
एकद्वित्रिचतुर्विप्रान् भोजयेत्स्नातकान्द्विजः ॥ ५ ॥
स्वयंकृष्टेतथाक्षेत्रे धान्यैश्चस्वयमर्जितैः ।
निर्वपेत्पञ्चयज्ञांश्च क्रतुदीक्षांचकारयेत् ॥ ६ ॥
तिलारसानविक्रेया विक्रेयाधान्यतत्समाः ।
विप्रस्यैवंविधावृत्तिस्तृणकाष्ठादिविक्रयः ॥ ७ ॥
ब्राह्मणस्तुकृषिंकृत्वा महादोषमवाप्नुयात् ।
अष्टागवंधर्म्यहलं षड्गवंवृत्तिलक्षणम् ॥ ८ ॥
चतुर्गवंनृशंसानां द्विगवंगोजिघांसिनाम् ।
द्विगवंवाहयेत्पादं मध्यान्हंतुचतुर्गवम् ॥ ९ ॥

चावे जो भूखा प्यासा थका किसी अंग से हीन रोगी–और नपुंसक हो ॥ ३ ॥ जो स्थिरांग (जिस के अंग सब पुष्ट हों) रोग रहित–उद्धत खूब शब्द करता हो–जो बधिया न किया गया हो–ऐसे बैल को आधे दिन जुतवावे और पीछे स्नान करे ॥ ४ ॥ जप देवताओं की पूजा होम और छः अङ्गों सहित वेद का पाठ इन का अभ्यास करे और एक, दो, तीन, वा चार ब्राह्मणों (जो ब्रह्मचर्य समाप्त करके गृहाश्रम में आये हों) को भोजन करावे ॥ ५ ॥ आप जोते खेत में और आप ही पैदा किये अन्नों से पंचयज्ञ करे और यज्ञ की दीक्षा भी करावे ॥ ६ ॥ तिल तथा छः रसों को न वेंचै । अन्न और जो अन्न के समान हैं उन को, और तृण काठ आदि को वेंचै । ब्राह्मणकी यह जीविका वैश्यवृत्तियोंमें है ॥७॥ जो ब्राह्मण खेती करे तो महादोषको प्राप्त हो-तथापि यदि आपत् कालमें खेती करनी पड़े तो आठ बैलका हल धर्मानुकूल है, छः बैल जिसमें हों वह मध्यम जीविका के लिये है ॥८॥ चार जिसमें बैल हों वह हिंसकों का है दो बैलों का हल जोतने वाला गोहत्यारेके सदृश है, दो बैल वाले हल को चौथाई दिन जोते चार बैल के हल को मध्यान्ह तक जोते ॥९॥

षड्गवंतुत्रियामाहेऽष्टभिःपूर्णंतुवाहयेत् ।
नयातिनरकेष्वेवं वर्त्तमानस्तुवैद्विजः ॥ १० ॥
दानंदद्यात्त्वैतेभ्यः प्रशस्तंस्वर्गसाधनम् ।
संवत्सरेणयत्पापं मत्स्यघातीसमाप्नुयात् ॥ ११ ॥
अयोमुखेनकाष्ठेन तदेकाहेनलाङ्गली ।
पाशकोमत्स्यघातीच व्याधःशाकुनिकस्तथा ॥१२॥
अदाताकर्षकश्चैव पञ्चैतेसमभागिनः ।
कण्डनीपेषणीचुल्ही उदकुम्भीचमार्जनी ॥ १३ ॥
पञ्चसूनागृहस्थस्य अहन्यहनिवर्त्तते ।
वैश्वदेवोबलिर्भिक्षा गोग्रासोहन्तकारकः ॥ १४ ॥
गृहस्थःप्रत्यहंकुर्यात्सूनादोषैर्नलिप्यते ।
वृक्षाञ्छित्वामहींभित्वा हत्वाचकृमिकीटकान् ॥१५॥
कर्षकःखलुयज्ञेन सर्वपापैःप्रमुच्यते ।
योनदद्याद्द्विजातिभ्यो राशिमूलमुपागतः ॥ १६ ॥

छः बैलों के हल को दिन के तीन पहर और आठ बैल के हल को सब दिन जोते ऐसे वर्तता हुआ द्विज नरक में नहीं जाता ॥१०॥ स्वर्ग का उत्तम साधन दान ब्राह्मणों को ही देवे । मच्छियों को मारने वाला एक वर्ष में जिस पाप का भागी होता है ॥ ११ ॥ लोहा है मुख में जिस के ऐसे काठ (हल) वाला ब्राह्मण एक दिन में उस पापका भोगने वाला होता है । १-पाशक (फांसी देके मारने वाला,) २-मच्छियों का मारने वाला, ३-हिरणादि को मारने वाला वधिक ४-पक्षियों को पकड़ने वाला ॥१२॥ तथा पांचवां जो दान न देवे और खेती करने वाला हो-ये पांचों एक ही प्रकार के समान पाप भागी हैं । ओखली, चक्की, चूल्हा, जल के घड़े, मार्जनी (बुहारी) ॥१३॥ ये पांच हत्या गृहस्थ पुरुष को नित्य २ लगती हैं । वैश्वदेव (देवयज्ञ) बली (भूतयज्ञ) भिक्षा देना, गोग्रास, और हंतकार नामं अतिथियज्ञ ॥१४॥ इन पांचों को जो गृहस्थी प्रतिदिन करता है वह पूर्वोक्त पांच हत्याओंके दोषसे लिप्त नहीं होता । वृक्षोंको काटने पृथ्वी के खोदने, कृमि और कीड़ोंके मारनेसे जो पाप खेतीमें होता है ॥१५॥ खेती करने वाला यज्ञ करनेसे उन सब पापोंसे छूटजाता है । जिसके अन्नकी राशि हुई हो और वह समीपमें

सचौरःसचपापिष्ठो ब्रह्मघ्नंतंविनिर्द्दिशेत् ।
राज्ञेदत्वातुषड्भागं देवानांचैकविंशकम् ॥ १७ ॥
विप्राणांत्रिंशकंभागं कृषिकर्त्तानलिप्यते ।
क्षत्रियोपिकृषिंकृत्वा देवान्विप्रांश्चपूजयेत् ॥ १८ ॥
वैश्यःशूद्रस्तथाकुर्यात्कृषिवाणिज्यशिल्पकम् ।
विकर्मकुर्वतेशूद्रा द्विजशुश्रूषयोज्झिताः ॥ १९ ॥
भवन्त्यल्पायुषस्तैवै निरयंयान्त्यसंशयम् ।
चतुर्णामपिवर्णानामेषधर्मःसनातनः ॥ २० ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

अतःशुद्धिंप्रवक्ष्यामि जननेमरणेतथा ।
दिनत्रयेणशुद्ध्यन्ति ब्राह्मणाप्रेतसूतके ॥ १ ॥
क्षत्रियोद्वादशाहेन वैश्यःपञ्चदशाहकैः ।
शूद्रःशुद्ध्यतिमासेन पराशरवचोयथा ॥ २ ॥
उपासनेतुविप्राणामङ्गशुद्धिश्चजायते ।
ब्राह्मणानांप्रसूतौतु देहस्पर्शोविधीयते ॥ ३ ॥

आये ब्राह्मणों को न दे तो ॥ १६ ॥ वह चौर और पापी है उसे ब्रह्महत्यारा कहते हैं । छठा भाग राजा को और इक्कीसवां भाग देवताओं को ॥ १७ ॥ तीसवां भाग ब्राह्मणों को जो देता है वह खेती के दोष से लिप्त नहीं होता । क्षत्रिय भी खेती करे तो देवता और ब्राह्मणों की पूजा करे ॥ १८ ॥ तिसी प्रकार वैश्य और शूद्र भी खेती वाणिज्य (व्यापार) और कारीगरी-इन को करें । द्विजों की सेवा को छोड़ कर शूद्र लोग जो कर्म करते हैं वह खोटा काम है ॥ १९ ॥ और वे शूद्र थोड़ी अवस्थावाले होतेहैं और नरक में जातेहैं इसमें संशय नहीं चारों वर्णों का यह सनातनधर्म है ॥२०॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे २ अध्यायः ॥

अब जन्म आर मरण समय में शुद्धि को कहते हैं । मरने के सूतक में मध्य, कोटि के धर्मनिष्ठ ब्राह्मण तीन दिन में शुद्ध होते हैं ॥ १ ॥ क्षत्रिय बारह दिन में वैश्य पन्द्रह दिन में शूद्र एक महीने में पराशर के वचनानुसार शुद्ध होते हैं ॥ २ ॥ ब्राह्मणों की सेवा करने से सेवक का देह शुद्ध हो जाता है । और जन्म सूतक में शूद्र को

जातौविप्रोदशाहेन द्वादशाहेनभूमिपः ।
वैश्यःपञ्चदशाहेन शूद्रोमासेनशुद्ध्यति ॥ ४ ॥

एकाहाच्छुद्ध्यतेविप्रो योऽग्निवेदसमन्वितः ।
त्र्यहात्केवलवेदस्तु द्विहीनोदशभिर्द्दिनैः ॥ ५ ॥

जन्मकर्मपरिभ्रष्टः सन्ध्योपासनवर्जितः ।
नामधारकविप्रस्तु दशाहंसूतकीभवेत् ॥ ६ ॥

अजागावोमहिष्यश्च ब्राह्मणीनवसूतिका ।
दशरात्रेणसंशुद्ध्येद्द भूमिस्थञ्चनवोदकम् ॥ ७ ॥

एकपिण्डास्तुदायादाः पृथग्दारनिकेतनाः ।
जन्मन्यपिविपत्तौच तेषांतत्सूतकंभवेत् ॥ ८ ॥

उभयत्रदशाहानि कुलस्यान्नं न भुञ्जते ।
दानंप्रतिग्रहोहोमः स्वाध्यायश्चनिवर्त्तते ॥ ९ ॥

ब्राह्मण के देह का स्पर्श कहा है अर्थात् शूद्र के यहां होमादि से शुद्धि नहीं है । किन्तु शुद्धि के दिन पूरे हों तव स्नानादि करके ब्राह्मणों के चरणस्पर्श कर शूद्र शुद्ध होते हैं ॥ ३ ॥ जन्म सूतक में ब्राह्मण दशदिन में, क्षत्रिय बारह दिन में, वैश्य पन्द्रह दिन में, और शूद्र एक महीने में शुद्ध होते हैं ॥ ४ ॥ अग्निहोत्र और वेदाध्ययन दोनों धर्म कृत्य यथोक्त करने वाला ब्राह्मण एक दिन में, केवल वेदपाठी तीन दिन में और जो इन दोनों से हीन हो वह ब्राह्मण दश दिन में शुद्ध होता है ॥ ५ ॥ द्वितीय जन्म रूप उपनयनादि संस्कार से तथा कर्म से हीन- और संध्योपासन जो न करता हो ऐसा जो नाम धारने वाला ब्राह्मण वह दश दिन के सूतक का भागी होता है ॥ ६ ॥ वकरी-गौ-भैंस--नवसूतिका (जिस के प्रथम ही सन्तान हुआ हो) ऐसी ब्राह्मणी और पृथ्वी पर ठहरा नूतन जल ये दश दिन में शुद्ध होते हैं ॥ ७ ॥ जो पिता के अंश के भागी हैं एक मा वाप से उत्पन्न हुए जिन के पृथक् २ स्त्री और घर हैं जन्म और मरण का सूतक उन सब को होता है ॥ ८ ॥ दोनों प्रकार के सूतकों में सूतक वालों का अन्न दश दिन तक अन्य लोगों को नहीं खाना चाहिये । दान देना, दान लेना, ब्रह्मयज्ञ और होम भी सूतक में नहीं करना चाहिये ॥ ९ ॥

तावत्तत्सूतकंगोत्रे चतुर्थपुरुषेणतु ।
दायाद्विच्छेदमाप्नोति पञ्चमोवात्मवंशजः ॥
चतुर्थेदशरात्रंस्यात्षण्निशाःपुंसिपञ्चमे ।
षष्ठेचतुरहाच्छुद्धिः सप्तमेतुदिनत्रयात् ॥ ११ ॥
शृङ्ग्यग्निमरणेचैव देशान्तरमृतेतथा ।
बालेप्रेतेचसंन्यस्ते सद्यःशौचंविधीयते ॥ १२ ॥
दशरात्रेष्वतीतेषु त्रिरात्राच्छुद्धिरिष्यते ।
ततःसंवत्सरादूर्ध्वं सचैलंस्नानमाचरेत् ॥ १३ ॥
देशान्तरमृतःकश्चित्सगोत्रःश्रूयतेयदि ।
नत्रिरात्रमहोरात्रं सद्यःस्नात्वाशुचिर्भवेत् ॥ १४ ॥
आत्रिपक्षात्त्रिरात्रंस्यादाषण्मासाच्चपक्षिणी ।
अहःसंवत्सरादर्वाक्सद्यःशौचंविधीयते ॥ १५ ॥
देशान्तरगतोविप्रः प्रयासात्कालकारितात् ।
देहनाशमनुप्राप्तस्तिथिर्नज्ञायतेयदि ॥ १६ ॥

एक गोत्रमें चौथी पीढ़ी तक ही पूरा सूतक भी होता है क्योंकि अपने वंशका पांचवां पुरुष सपिण्डता से विभक्त होजाने से पृथक् हो जाता है ॥१०॥ चतुर्थ पीढी तक दश दिन पांचवीं पीढी में छः दिन रात-छठी पीढी में चार दिन और सातवी पीढीमें तीन दिन में शुद्धि होती हैं ॥११॥ सींग वाले पशुओं से-वा अग्नि से मरने में वा देशान्तर के मरने में-: बालक के मरने में और अपने कुटुम्बी संन्यासी के मरने में उसी समय शुद्धि हो जाती है ॥ १२ ॥ दश दिन वीत जाने पर विदेशमें सगोत्री का मरण सुने तो तीन दिनमें शुद्धि और एकवर्ष वाद सुने तो तत्काल वस्त्रों सहित स्नान करने से शुद्धि होती है ॥ १३ ॥ यदि देशान्तर में मरा सगोत्री अधिक काल वीतने पर सुना जाय तो तीन दिन वा एक दिन रात आशौच न माने किन्तु शीघ्र ही स्नान करने से तत्काल शुद्धि होती है ॥१४॥ डेढ़ महीने तक सुननेपर तीन दिनमें शुद्धि छः महीनेमें सुने तो एक दिनरातमें शुद्धि करै, वर्ष भरके भीतर सुने तो एक दिन मात्रमेंशुद्धिऔर पश्चात् वर्ष बीत जाने पर तत्काल शुद्धि कर लेवे ॥१५॥ यदि देशान्तरमें गया ब्राह्मण देशकालानुसार किये विशेष परिश्रमसे मरजाय और मरनेकी तिथि मालूम नहो॥१६॥

कृष्णाष्टमीत्वमावास्या कृष्णाचैकादशीचया ।
उदकंपिण्डदानंच तत्रश्राद्धंचकारयेत् ॥ १७ ॥
अजातदन्तायेबाला येचगर्भाद्विनिस्सृताः ।
नतेषामग्निसंस्कारो नाशौचंनोदकक्रिया ॥ १८ ॥
यदिगर्भोविपद्येत स्रवतेवापियोषिताम् ।
यावन्मासंस्थितोगर्भो दिनंतावत्तुसूतकम् ॥ १९ ॥
आचतुर्थाद्भवेत्स्रावः पातःपञ्चमषष्ठयोः ।
अतऊर्द्ध्वंप्रसूतिःस्याद्दशाहंसूतकंभवेत् ॥ २० ॥
प्रसूतिकालेसंप्राप्ते प्रसवेयदियोषिताम् ।
जीवापत्येतुगोत्रस्य मृतेमातुश्चसूतकम् ॥ २१ ॥
रात्रावेवसमुत्पन्ने मृतेरजसिसूतके ।
पूर्वमेवदिनंग्राह्यं यावन्नोदयतेरविः ॥ २२ ॥
दन्तजातेनुजातेच कृतचूडेचसंस्थिते ।
अग्निसंस्करणंतेषां त्रिरात्रंसूतकंभवेत् ॥ २३ ॥

तो कृष्णपक्ष की आठैं, अमावस, अथवा कृष्ण एकादशी में जलदान, पिण्डदान और श्राद्ध करे ॥ १७ ॥ जो दांतों के निकलने से पहिले वा गर्भसे निकलते ही मर गये हों उनको अग्निका दाह, अशौच और जलदान (तिलाञ्जलि) नहीं करना चाहिये ॥१८॥ यदि गर्भ में विपत्ति (मरना) हो जाय वा स्त्री का गर्भ ही गिर जाय तो जितने महीने का गर्भ हो उतने ही दिन का सूतक होता है ॥ १९ ॥ चार महीने तक का जो गर्भ गिरे उसे गर्भस्राव कहते हैं, पांच और छठें महीने का गिरे तो उसे गर्भपात कहते हैं इससे आगे प्रसूति होती है उसका सूतक जीवित रहै तो दश दिन का होता है ॥ २० ॥ स्त्रियों के प्रसव समय में यदि जीवित सन्तान पैदा हो तो चार पीढ़ी तक के गोत्र वालों को आशौच लगता और मरा पैदा हो तो केवल माता को अशुद्धि लगती है ॥ २१ ॥ यदि रात्रि में मरा हुआ सन्तान पैदा हो या रजोधर्म हो तो सूतक वा अशुद्धिके लिये सूर्योदयसे पहिले बीते हुए दिनसे ही गणना करनी चाहिये ॥ २२ ॥ दांत उगने के पीछे वा दांत निकलते ही अथवा मुण्डन हो जाने पर बालक मर जाय

आदन्तजननात्सद्य आचूडान्नैशिकीस्मृता ।
त्रिरात्रमाव्रतात्तेषां दशरात्रमतःपरम् ॥ २४ ॥
गर्भेयदिविपत्तिःस्याद्दशाहंसूतकंभवेत् ।
जीवन्जातोयदिप्रेतः सद्यएवविशुद्ध्यति ॥ २५ ॥
स्त्रीणांचूडान्नआदानात्संक्रमात्तदधःक्रमात् ।
सद्यःशौचमथैकाहं त्रिरहःपितृवन्धषु ॥ २६ ॥
ब्रह्मचारीगृहेयेषां हूयतेचहुताशनः ।
संपर्कंचेन्नकुर्वन्ति नतेषांसूतकंभवेत ॥ २७ ॥
संपर्काद्दुष्यतेविप्रो जननेमरणेतथा ।
संपर्काच्चनिवृत्तस्य नप्रेतंनैवसूतकम् ॥ २८ ॥
शिल्पिनःकारुकावैद्या दासीदासाश्चनापिताः ।
राजानःश्रोत्रियाश्चैव सद्यःशौचाःप्रकीर्तिताः ॥ २९ ॥

तो उसका अग्निसे दाह करै और तीन दिन रात अशुद्धि माने ॥ २३ ॥ दांतोंके निकलने से पहिले जो बालक मरै तो उसी समय, चूड़ाकर्म से पहिले मरै तो एक दिन रात और यज्ञोपवीत से पहिले मरे तो तीन दिन रात का अशौच होता है इससे परे दश दिन का होता है ॥ २४ ॥ यदि गर्भ में विपत्ति हो अर्थात् जीवित बच्चा पैदा होकर मर जाय तो दश दिन और मरा हुआ पैदा हो तो तत्काल शुद्धि होती है॥ २५ ॥ चूड़ा कर्म से पहिले कन्या मरे तो तत्काल शुद्धि होती सगाई से पहिले मरे तो एक दिन रात वाग्दान होने पर सप्तपदी से पहिले मरे तो पितृ गोत्र वालों को तीन दिन रात शुद्धि माननी चाहिये ॥ २६ ॥ जिनके घर में समिदाधान करता हुआ ब्रह्मचारी रहता हो और वह यदि मर जाय तो जिन लोगोंने उसका स्पर्श नहीं किया उन्हें सूतक नहीं लगता ॥ २७ ॥ जन्म और मरण सम्बन्धी सूतक में सात पीढ़ी वालों से भिन्न ब्राह्मण स्पर्श करने से दूषित होता है यदि संपर्क न करै तो दोनों ही सूतक नहीं लगते ॥ २८ ॥ शिल्पी (चित्र बनाने वाले) कारीगर, वैद्य, दासी (टहलनी) दास, नाई राजा, चौर, वेदपाठी, इनको उसी समय तत्काल शुद्धि होती है ॥ २९ ॥ जिसने

सव्रतीमन्त्रपूतश्च आहिताग्निश्चयोद्विजः ।
राज्ञश्चसूतकंनास्ति यस्यचेच्छतिपार्थिवः ॥ ३० ॥
उद्यतोनिधनेदाने आर्त्तोविप्रोनिमन्त्रितः ।
तदैवऋषिभिर्दृष्टं यथाकालेनशुद्ध्यति ॥ ३१ ॥
प्रसवेगृहमेधीतु नकुर्यात्सङ्करंयदि ।
दशाहाच्छुद्ध्यतेमाता त्ववगाह्यपिताशुचिः ॥ ३२ ॥
सर्वेषांशावमाशौचं मातापित्रोस्तुसूतकम् ।
सूतकंमातुरेवस्या-दुपस्पृश्यपिताशुचिः ॥ ३३ ॥
यदिपत्न्यांप्रसूतायां संपर्ककुरुतेद्विजः ।
सूतकंतुभवेत्तस्य यदिविप्रःषडङ्गवित् ॥ ३४ ॥
संपर्क्काज्जायतेदोषो नान्योदोषोस्तिवैद्विजे ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन संपर्कंवर्जयेद्बुधः ॥ ३५ ॥
विवाहोत्सवयज्ञेषु त्वन्तरामृतसूतके ।
पूर्वसंकल्पितंद्रव्यं दीयमानंनदुष्यति ॥ ३६ ॥

किसी नियत काल तक व्रत ले रक्खा हो, वेदमन्त्रों के जपसे जो पवित्र हैं, जो द्विज विधिपूर्वक अग्नि स्थापन करके अग्निहोत्री हैं, राजा को और जिस के सूतक को राजा न चाहै उसको सूतक नहीं लगता है ॥ ३० ॥ दान में उद्यत (तय्यार) मनुष्य यदि मर जाय और आर्त्त (दुःखी) ब्राह्मण को दान देने का न्योता दे रक्खा हो तो उसी दान के समय पर शुद्ध होता है यह ऋषियों ने जाना अर्थात् कहा है ॥ ३१ ॥ यदि जन्म सूतक में ब्राह्मण सूतिका का सङ्कर (स्पर्श) न करै तो माता दश दिन में और पिता स्नान करके शुद्ध हो जाता है ॥ ३२ ॥ शाव (मुर्दे का) आशौच छः पीढ़ी तक सब को और जन्मसूतक माता पिता को ही लगता है और उन दोनों में भी माता ही विशेषकर अशुद्ध होती है पिता तो स्नान करने से ही शुद्ध हो जाता है ।३३। जिस ब्राह्मण की स्त्री प्रसूता हो और वह पत्नी का स्पर्श करै तो चाहै वह वेद के छः अंग का पण्डित भी हो तो उसे सूतक लगता है ॥ ३४ ॥ ब्राह्मण को संपर्क से दोष लगता है अन्य कुछ दोष नहीं है तिससे बड़े यत्नसे ज्ञानवान् द्विज संपर्क न करे ॥३५॥ विवाह, उत्सव, यज्ञ, इनके बीच यदि मरण वा जन्म होजाय तो पूर्व संकल्पित किये

अन्तरात्तुदशाहस्य पुनर्मरणजन्मनी ।
तावत्स्यादशुचिर्विप्रो यावत्तत्स्यादनिर्दशम् ॥ ३७ ॥
ब्राह्मणार्थेविपन्नानां वन्दिगोग्रहणेतथा ।
आहवेषुविपन्नानामेकरात्रमशौचकम् ॥ ३८ ॥
द्वाविमौपुरुषौलोके सूर्यमण्डलभेदिनौ ।
परिव्राड्योगयुक्तश्च रणेचाभिमुखोहतः ॥ ३९ ॥
यत्रयत्रहतःशूरः शत्रुभिःपरिवेष्टितः ।
अक्षयांल्लभतेलोकान् यदिक्लीवंनभाषते ॥ ४० ॥
संन्यस्तंब्राह्मणंदृष्ट्वा स्थानाच्चलतिभास्करः ।
एषमेमण्डलंभित्त्वा परंस्थानंप्रयास्यति ॥ ४१ ॥
यस्तुभग्नेषुसैन्येषु विद्रवत्सुसमन्ततः ।
परित्रातायदागच्छेत्सचक्रतुफलंलभेत् ॥ ४२ ॥

द्रव्य के देनेका दोष नहीं है ॥ ३६ ॥ यदि सूतक के दश आदि दिन पूरे होनेसे पहिले दूसरा मरण वा जन्म हो जाय तो ब्राह्मण तभी तक अशुद्ध होता है कि जब तक पहिले दश दिन पूरे हों ॥ ३७ ॥ ब्राह्मण के लिये मरे, भागे (कैदी) के तथा गौ के पकड़ने में जो मारे गये और संग्राम में जो मरे हैं इन सबको एक दिन रात का अशौच लगता है ॥ ३८ ॥ दो पुरुष जगत् में सूर्य मण्डल को भेदन कर ब्रह्मलोकको प्राप्त होने वाले हैं एक तो योग युक्त योगाभ्यासी संन्यासी और दूसरा जो संग्राम में सन्मुख मरा हो ॥ ३९ ॥ शत्रुओं से युद्ध में घेरा हुआ शूरवीर पुरुष जहां २ मारा जाता है वह अक्षय लोकों को प्राप्त होता है यदि वह क्लीव (कातरता के वचन न कहै तो) ॥ ४० ॥ संन्यासी ब्राह्मण को देखकर सूर्य नारायण भी अपने स्थान से चलायमान हो जाते हैं क्योंकि सूर्यनारायण को भय हो जाता है कि यह संन्यासी मेरे मण्डल को लांघकर परम स्थान (ब्रह्मलोक) को जायगा ॥ ४१ ॥ जो शत्रुओं ने मारी पीटी और चारों ओर भागती हुई सेना के मनुष्यों की रक्षा के लिये जाता है वह यज्ञ के फल को पाता है ॥ ४२ ॥ जिस का शरीर बाण मुद्गर—लाठी

यस्यच्छेदक्षतंगात्रं शरमुद्गरयष्टिभिः ।
देवकन्यास्तुतंवीरं हरन्तिरमयन्तिच ॥ ४३ ॥
देवाङ्गनासहस्राणि शूरमायोधनेहतम् ।
त्वरमाणाःप्रधावन्ति ममभर्ताममेतिच ॥ ४४ ॥
यंयज्ञसंघैस्तपसाचविप्राः स्वर्गैषिणोवात्रयथैवयान्ति।
क्षणेनयान्त्येवहितत्रवीराः प्राणान्सुयुद्धेनपरित्यजन्तः॥४५॥
जितेनलभ्यतेलक्ष्मीम् तेनापिवराङ्गनाः ।
क्षणध्वंसिनिकायेस्मिन्काचिन्तामरणेरणे॥ ४६ ॥
ललाटदेशाद्रुधिरंस्रवच्चयस्याहवेतुप्रविशेतवक्त्रम् ।
तत्सोमपानेनकिलास्यतुल्यंसंग्रामयज्ञेविधिवच्चदृष्टम्॥४७
अनाथंब्राह्मणंप्रेतं येवहन्तिद्विजातयः ।
पदेपदेयज्ञफलमानुपूर्व्याल्लभन्तिते ॥ ४८ ॥
नतेषामशुभंकिञ्चिद् द्विजानांशुभकर्मणि ।
जलावगाहनात्तेषां सद्यःशौचंविधीयते ॥ ४९ ॥

इनके प्रहार जन्य छिद्रोंसे घायल हुआ है उस मनुष्य को देवताओं की कन्या बुला ले जातीं और रमण करातीं हैं ॥ ४३ ॥ संग्राम में मारे गये शूरवीर के सन्मुख हजारों देवताओं की कन्या शीघ्रता करतीं हुईं दौड़ती हैं कि यह मेरा भर्ता यह मेरा भर्त्ता हो ॥ ४४ ॥ यज्ञों के समूह और तप करके स्वर्ग की इच्छा करने वाले ब्राह्मण जिस लोक में जिस प्रकार जाते हैं उसी लोक में क्षणमात्र में ही वे शूरवीर जाते हैं जो युद्ध में प्राणों को त्यागते हैं ॥ ४५ ॥ जब युद्ध में जय होने से लक्ष्मी और मरने से स्वर्ग मिलता है तो क्षणमात्रमें नष्ट होने वाली कायाके रणमें मरनेकी क्या चिन्ता है? ॥४६॥ संग्राम में मस्तक से गिरता हुआ रुधिर जिस के मुख में प्रवेश करता है वह मुख संग्राम रूपी यज्ञ में विधिपूर्वक सोमपान करने वाले मुख के तुल्य है ॥ ४७ ॥ जो द्विजाति लोग मरे हुए अनाथ ब्राह्मण को श्मशान में ले जाते हैं वे क्रम से पग २ में यज्ञ के फल को प्राप्त होते हैं ॥ ४८ ॥ और उन द्विजों को शुभ कर्म करने में कुछ भी अशुभ वा दोष नहीं है क्योंकि जल में स्नान करने से उन की उसी समय शुद्धि हो

असगोत्रमबन्धुंच प्रेतीभूतंद्विजोत्तमम् ।
स्नात्वाचदाहयित्वाच प्राणायामेनशुद्ध्यति ॥ ५० ॥
अनुगम्येच्छयाप्रेतं ज्ञातिमज्ञातिमेववा ।
स्नात्वासचैलंस्पृष्ट्वाग्निं घृतंप्राश्यविशुध्यति ॥५१॥
क्षत्रियंमृतमज्ञानाद् ब्राह्मणोयोऽनुगच्छति ।
एकाहमशुचिर्भूत्वा पञ्चगव्येनशुद्ध्यति ॥ ५२ ॥
शवंचवैश्यमज्ञानाद् ब्राह्मणोह्यनुगच्छति ।
कृत्वाशौचंद्विरात्रंच प्राणायामान्षडाचरेत् ॥ ५३ ॥
प्रेतीभूतंतुयःशूद्रं ब्राह्मणोज्ञानदुर्बलः ।
अनुगच्छेन्नीयमानं त्रिरात्रमशुचिर्भवेत् ॥ ५४ ॥
त्रिरात्रेतुततःपूर्णे नदींगत्वासमुद्रगाम् ।
प्राणायामशतंकृत्वा घृतंप्राश्यविशुद्ध्यति ॥ ५५ ॥
विनिवर्त्यंयदाशूद्रा उदकान्तमुपस्थिताः ।
द्विजैस्तदानुगन्तव्या एषधर्मःसनातनः ॥ ५६ ॥

जाती है ॥ ४९ ॥ जो ब्राह्मण अपने गोत्र का न हो और अपना बन्धु भी न हो वह मरजाय तो श्मशान में ले जा कर और दाह करके प्राणायाम करने से शुद्ध हो जाता है ॥ ५०॥ अपने वर्ण के वा अन्य वर्ण के मुर्दों के संग जाकर वस्त्रों सहित स्नान, अग्नि का स्पर्श और थोड़ा घी खाकर शुद्ध हो जाता है ॥ ५१ ॥ मरे हुए क्षत्रिय के संग जो ब्राह्मण अज्ञान से श्मशान में जाता है वह एक दिन अशुद्ध रह कर पञ्चगव्य सेवन करने से शुद्ध होता है ॥ ५२ ॥ जो ब्राह्मण मरे हुए वैश्य के संग अज्ञान से जावे वह दो दिन रात का अशौच करके छः प्राणायाम करे ॥ ५३ ॥ जो अज्ञानी ब्राह्मण मरे हुए शूद्र के संग श्मशान में जाता है वह तीन दिन रात अशुद्ध होता है ॥ ५४ ॥ तीन दिन के पीछे जो समुद्र में जाने वाली हो उस गंगादि नदी में जाके स्नान करे तब सौ प्राणायाम कर और घी खाके शुद्ध होता है ॥ ५५ ॥ जब श्मशान से लौटकर शूद्र लोग जल के समीप तिलाञ्जलि देने को आवें तब द्विज लोग उन के समीप जांय यही सनातन धर्म की रीति है ॥ ५६ ॥ तिस से द्विज लोग मरे हुए शूद्र का न तो

तस्माद्वुद्विजोमृतंशूद्रं नस्पृशेन्नचदाहयेत् ।
दृष्टेसूर्यावलोकेन शुद्धिरेषापुरातनी ॥ ५७ ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ॥

अतिमानादतिक्रोधात्स्नेहाद्वायदिवाभयात् ।
उद्बध्नीयात्स्त्रीपुमान्वा गतिरेषाविधीयते ॥ १ ॥
पूयशोणितसंपूर्णे त्वन्धेतमसिमज्जति ।
षष्टिंवर्षसहस्राणि नरकंप्रतिपद्यते ॥ २ ॥
नाशौचंनोदकंनाग्निं नाश्रुपातंचकारयेत् ।
वोढारोऽग्निप्रदातारः पाशच्छेदकरास्तथा ॥ ३ ॥
तप्तकृच्छ्रेणशुद्ध्यन्तीत्येवमाहप्रजापतिः ।
गोभिर्हतंतथोद्बद्धं ब्राह्मणेनतुघातितम् ॥ ४ ॥
संस्पृशन्तितुयेविप्रा वोढारश्चाग्निदाश्चये ।
अन्येऽपिवाऽनुगन्तारः पाशच्छेदकराश्चये ॥ ५ ॥

स्पर्श करें और न दाह करावें यदि मरे शूद्र को देख लें तो सूर्यनारायण के दर्शन से शुद्धि होती है यह शुद्धि पुरातन धर्म की मर्यादा है ॥ ५७ ॥

यह पाराशरीय धर्मशास्त्र का तीसरा अध्याय पूरा हुआ ॥

अत्यन्त मान से वा अत्यन्त क्रोध से वा किसी के साथ अधिक प्रेम होने से वा भय से स्त्री अथवा पुरुष परस्पर फांसी दें तो उन की निम्न लिखित गति होती है ॥ १ ॥ पीव और रुधिर से भरे अन्धतामिस्र नरक में साठ हजार वर्ष तक गोता खाते हैं ॥ २ ॥ न उन का अशौच, न जलदान, न अग्निदाह, और न आंसू बहाते हुये उन के लिये कोई रोवे जो उन्हें गंगा आदि में ले जांय वा जो अग्नि में दाह करे और जो उन की फांसी को काटे ॥ ३ ॥ वे लोग तप्त कृच्छ्र व्रत करनेसे शुद्ध होते हैं ऐसा प्रजापति ने कहा है–जो पुरुष गौओं से मारा गया हो वा बन्धन (फांसी) से मरा हो वा जिस को ब्राह्मण ने मारा हो ॥ ४ ॥ उसका जो ब्राह्मण स्पर्श करें वा उसके मृत देह को श्मशान में लेजांय वा जो अग्नि में दाह करे और जो उस के संग जायं

तप्तकृच्छ्रेणशुद्धास्ते कुर्युर्ब्राह्मणभोजनम् ।
अनडुत्सहितांगांच दद्युर्विप्रायदक्षिणाम् ॥ ६ ॥
त्र्यहमुष्णंपिबेद्वारि त्र्यहमुष्णंपयःपिबेत् ।
त्र्यहमुष्णंपिबेत्सर्पिर्वायुभक्षोदिनत्रयम् ॥ ७ ॥
षट्पलंतुपिबेदम्भस्त्रिपलन्तुपयःपिबेत् ।
पलमेकंपिबेत्सर्पिस्तप्तकृच्छ्रं विधीयते ॥ ८ ॥
योवैसमाचरेद्विप्रः पतितादिष्वकामतः ।
पञ्चाहंवादशाहंवा द्वादशाहमथापिवा ॥ ९ ॥
मासार्द्धमासमेकंवा मासद्वयमथापिवा ।
अब्दार्द्धमब्दमेकंवा भवेदूर्ध्वंहितत्समः ॥ १० ॥
त्रिरात्रंप्रथमेपक्षे द्वितीयेकृच्छ्रमाचरेत् ।
तृतीयेचैवपक्षेतु कृच्छ्रं सान्तपनंचरेत् ॥ ११ ॥
चतुर्थेदशरात्रंस्यात्पराकःपञ्चमेमतः ।
कुर्याच्चान्द्रायणंषष्ठे सप्तमेत्वैन्दवद्वयम् ॥ १२ ॥

वा जो फांसी काटें ॥ ५ ॥ वे तप्त कृच्छ्र व्रत से शुद्ध हुए ब्राह्मणों को भोजन करावें और एक बैल और एक गौ ब्राह्मण को दक्षिणा देवें ॥ ६ ॥ तीन दिन गर्म जल पीवें फिर तीनदिन गर्म दूध पीवे फिर तीनदिन गर्म घी पीवे फिर तीनदिन वायुको भक्षण करके रहे ॥ ७ ॥ छः पल जल, तीन पल दूध, एक पल घी, इस को तप्त कृच्छ्र कहते हैं (पांच तोला चार मासे का एक पल होता है) ॥ ८ ॥ जो ब्राह्मण पतित आदिकों के साथ अज्ञान से पांच, दश, वा बारह दिन व्यवहार करता है ॥ ९ ॥ पन्द्रह दिन, वा एक महीना, वा दो महीने, वा छः महीने, वा एक वर्ष, तक पतित के साथ व्यवहार करे वह उस प्रायश्चित्त को करै जो आगे कहेंगे और एक वर्ष से अधिक व्यवहार करे तो वह भी उसी पतित के तुल्य (पतित) होजाता है ॥१०॥ पांच दिन पतित का संग करने में तीन दिन उपवास, दस दिन करने में एक कृच्छ्र, बारह दिन के संग में सान्तपन कृच्छ्र करे ॥ ११ ॥ पन्द्रह दिन के संग में दश दिन का व्रत एक महीने के संग में पराक कृच्छ्र व्रत, दो महीने के संग में चान्द्रायण और छः महीने के संग में दो चान्द्रायण व्रत करै ॥ १२ ॥

शुद्ध्यर्थमष्टमेचैव षण्मासान्कृच्छ्रमाचरेत् ।
पक्षसंख्याप्रमाणेन सुवर्णान्यपिदक्षिणा ॥ १३ ॥
ऋतुस्नातातुयानारी भर्त्तारंनोपसर्पति ।
सामृतानरकंयाति विधवाचपुनःपुनः ॥ १४ ॥
ऋतुस्नातांतुयोभार्यां सन्निधौनोपगच्छति ।
घोरायांभ्रूणहत्यायां युज्यतेनात्रसंशयः ॥ १५ ॥
अदुष्टाऽपतितांभार्यां यौवनेयःपरित्यजेत् ।
सप्तजन्मभवेत्स्त्रीत्वं वैधव्यञ्चपुनःपुनः ॥ १६ ॥
दरिद्रं व्याधितंमूर्खं भर्त्तारंयावमन्यते ।
सामृताजायतेव्याली वैधव्यंचपुनःपुनः ॥ १७ ॥
पत्यौजीवतियानारी उपोष्यव्रतमाचरेत् ।
आयुष्यंहरतेभर्त्तुः सानारीनरकंव्रजेत् ॥ १८ ॥
अपृष्ट्वाचैवभर्त्तारं यानारीकुरुतेव्रतम् ।
सर्वंतद्राक्षसान्गच्छेदित्येवंमनुरब्रवीत ॥ १९ ॥

एक वर्ष के संग में छः महीने तक कृच्छव्रत करे और प्रत्येक पक्ष की संख्या के प्रमाण से सुवर्ण दान की संख्याओं का प्रमाण जानो । अर्थात् एक महीने के संग का प्रायश्चित्त हो तो दो सुवर्ण दक्षिणा देवे (सोलह मासा सोने को "सुवर्ण" कहते हैं) ॥ १३ ॥ जो स्त्री ऋतु कालमें चौथे दिन स्नान करके छठे आदि दिन पति के समीप नहीं जाती वह मर कर नरक में जाती है और वारंवार विधवा होती है ॥ १४ ॥ जो पुरुष ऋतु में स्नान जिसने किया हो उस अपनी पत्नी के समीप नहीं जाता उसे घोर भ्रूण हत्या लगती है ॥ १५ ॥ जो पतित न हुई हो ऐसी निर्दोष पत्नी को युवावस्था में जो पुरुष छोड़ देता है वह सात जन्म तक स्त्री योनि में जन्म लेता और वार २ विधवा होता है ॥ १६ ॥ दरिद्री, रोगी मूर्ख भी जो अपना पति हो उस का जो स्त्री अपमान करती है वह मर कर सांपिन होती और वार बार विधवा होती है ॥ १७ ॥ पति के जीवते जो स्त्री पति सेवा न करके उसकी आज्ञा से विरुद्ध उपवास तथा व्रत करती है वह अपने पति की अवस्था घटाती और आप नरक में जाती है ॥ १८ ॥ जो स्त्री अपने पति को पूछे विना व्रत करती है यह सब राक्षसोंको

बान्धवानांसजातीनां दुर्वृत्तंकुरुतेतुया ।
गर्भपातंचयाकुर्यान्न तांसंभाषयेत्क्वचित् ॥ २० ॥
यत्पापंब्रह्महत्याया द्विगुणंगर्भपातने ।
प्रायश्चित्तंनतस्यास्ति तस्यास्त्यागोविधीयते ॥ २१ ॥
नकार्यमावसथ्येन नाग्निहोत्रेणवापुनः ।
सभवेत्कर्मचाण्डालो यस्तुधर्मपराङ्मुखः ॥ २२ ॥
ओघवाताहृतंबीजं यस्यक्षेत्रेप्ररोहति ।
सक्षेत्रीलभतेबीजं नबीजीभागमर्हति ॥ २३ ॥
तद्वत्परस्त्रियःपुत्रौ द्वौसुतौकुण्डगोलकौ ।
पत्यौजीवतिकुण्डस्तु मृतेभर्तरिगोलकः ॥ २४ ॥
औरसःक्षेत्रजश्चैव दत्तःकृत्रिमकःसुतः ।
दद्यान्मातापितावापि सपुत्रोदत्तकोभवेत् ॥ २५ ॥

मिलता है यह मनुजी ने कहा है ॥ १९ ॥ जो स्त्री अपने सजातीय बांधवों के संग दुष्ट आचरण और गर्भपात करती है उसके संग कभी भी पति भाषण न करे ॥ २० ॥ जो पाप ब्रह्महत्या का है उस से दूना गर्भ के पात (गिराने) में है, उस गर्भ घातिनी का प्रायश्चित्त कुछ नहीं है, किन्तु उसका त्याग कर देवे ॥ २१ ॥ उस गर्भपात करने वाली पत्नी के त्याग से श्रौत स्मार्त्त अग्निहोत्र भले ही छूट जाय कुछ चिन्ता न करे किन्तु उस स्त्री के साथ अग्निहोत्र करने वाला धर्म विरोधी होने से कर्मचाण्डाल माना जायगा ॥ २२ ॥ आंधी रूप वायु के वेग से उड़कर आया बीज यदि दूसरे के खेत में उपज आवे तो वह खेत वाले का ही भाग होगा और बीज वाले को उस का भाग मिलना योग्य नहीं ॥ २३ ॥ इसी प्रकार अन्यपुरुष के बीज से दूसरे की स्त्री में जो पुत्र उत्पन्न हो वह भी उस का होगा जिस की वह स्त्री हो, सो ऐसे कुण्ड और गोलक दो पुत्र होते हैं जो पति के जीते जी जार से उत्पन्न हो वह कुण्ड और पति के मरे पीछे होय तो गोलक कहाता है ॥ २४ ॥ औरस, क्षेत्रज, दत्तक, और कृत्रिम ये चार पुत्र कहाते हैं। जिस को माता वा पिता दे देवे वह उसका दत्तक पुत्र होता है ॥ २५ ॥ परिवित्ति (परिवेत्ता का बड़ा भाई)

परिवित्तिःपरीवेत्ता ययाचपरिविद्यते ।
सर्वेतेनरकंयान्ति दातृयाजकपञ्चमाः ॥ २६ ॥
दाराग्निहोत्रसंयोगं कुरुतेयोऽग्रजेसति ।
परिवेत्तासविज्ञेयः परिवित्तिस्तुपूर्वजः ॥ २७ ॥
द्वौकृच्छ्रौपरिवित्तेस्तु कन्यायाःकृच्छ्रएवच ।
कृच्छ्रातिकृच्छ्रौदातुस्तु होताचान्द्रायणं चरेत् ॥२८॥
कुब्जवामनषण्ढेषु गद्गदेषुजडेषुच ।
जात्यन्धेबधिरेमूके नदोषःपरिविन्दतः ॥ २९ ॥
पितृव्यपुत्रःसापत्नः परनारीसुतस्तथा ।
दाराग्निहोत्रसंयोगे नदोषःपरिवेदने ॥ ३० ॥
ज्येष्ठोभ्रातायदातिष्ठेदाधानंनैवकारयेत् ।
अनुज्ञातस्तुकुर्वीत शंखस्यवचनंयथा ॥ ३१ ॥
नष्टेमृतेप्रव्रजिते क्लीवेचपतितेपतौ ।
पञ्चस्वापत्सुनारीणां पतिरन्योविधीयते ॥ ३२ ॥

परिवेत्ता (बड़े भाई से पहिले जो छोटा विवाह करै) वह कन्या जिस के साथ विवाह करने से वह परिवेत्ता हुआ है, कन्या का दाता और याजक (विवाह पढ़ने वाला) ये सब नरक में जाते हैं ॥ २६ ॥ ज्येष्ठ भाई से पहिले जो अपना विवाह करे वा ज्येष्ठ की आज्ञा के विना अग्निहोत्र ग्रहण करे वह परिवेत्ता और ज्येष्ठ भाई परिवित्ति कहाता है ॥ २७ ॥ परिवित्ति दो कृच्छ्र व्रत करे, कन्या एक कृच्छ्र व्रत करे, कन्याका दाता कृच्छ्र और अतिकृच्छ्र दोनों व्रत करे तथा विवाह कराने वाला पुरोहित चांद्रायण व्रत करै ॥ २८ ॥ कुबड़ा, बिलंदिया (बौना) नपुंसक, तोतला, महामूर्ख, जन्मान्ध, बहरा, गूंगा, इन ऐसे जेठे भाइयों के परिवेदन करने (पहिले विवाह वा अग्निहोत्र लेने) में दोष नहीं है ॥२९॥ यदि जेठा भाई चाचा का पुत्र हो, वा सौतेली माता का पुत्र हो, वा दूसरे की स्त्री का पुत्र हो तो उस से पहिलें विवाह करने और अग्निहोत्र लेने से उसके परिवेदन में दोष नहीं है ॥३०॥ जेठा भाई विद्यमान हो पर स्वयं अग्निहोत्र न ले तब शंख ऋषि के वचनानुसार उस बड़े भाई की आज्ञा से छोटा भाई अग्निहोत्र को ग्रहण करले ॥ ३१ ॥ जिस से सगाई हुई हो वह पति नष्ट (परदेश में गया हो और खबर न हो) हो जाय, वा मर जाय, वा संन्यासी हो जाय, वा

मृतेभर्त्तरियानारी ब्रह्मचर्यव्रतेस्थिता ।
सामृतालभतेस्वर्गं यथातेब्रह्मचारिणः ॥ ३३ ॥
तिस्रःकोट्योर्द्धकोटीच यानिलोमानिमानवे ।
तावत्कालंवसेत्स्वर्गे भर्त्तारंयाऽनुगच्छति ॥ ३४ ॥
व्यालग्राहीयथाव्यालं बलादुद्धरतेबिलात् ।
एवंस्त्रीपतिमुद्धृत्य तेनैवसहमोदते ॥ ३५ ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

वृकश्वानशृगालादि दष्टोयस्तुद्विजोत्तमः ।
स्नात्वाजपेत्सगायत्रीं पवित्रांवेदमातरम् ॥ १ ॥
गवांशृङ्गोदकस्नानात् महानद्योस्तुसङ्गमे ।
समुद्रदर्शनाद्वापि शुनादष्टःशुचिर्भवेत् ॥ २ ॥

नपुंसक निकले, वा पतित हो जाय, तो इन पांच आपत्तियों में ही दूसरा पति कहा है अर्थात् सगाई हुए पीछे दूसरे के संग सगाई करके विवाह कर देवे अर्थात् अन्य कुरूप दरिद्र मूर्खत्वादि दोष ज्ञात होने पर भी कानून उसी के साथ विवाह होना चाहिये ॥ ३२ ॥ पति के मरे पीछे जो स्त्री ब्रह्मचर्य व्रत में स्थित रहती है। वह मर कर स्वर्ग में इस प्रकार जाती है जैसे वे ब्रह्मचारी गये जिनने विवाह न करके ऊर्ध्व रेता रहते हुए तप करते २ शरीर छोड़ा ॥ ३३ ॥ जो स्त्री पति के संग अनुगमन (सती होना) करती है वह साढ़े तीन करोड़ मनुष्य के शरीर में जो लोम हैं उतने ही वर्ष तक स्वर्ग में वसती है ॥ ३४ ॥ सांप को पकड़ने वाला जैसे बिल में से सांप को बलात्कार से निकाल लेता है ऐसे ही वह स्त्री भी नरक से अपने पतिका [यदि पति कुकर्मी होने से नरक भागी हो तो] उद्धार करके उस पतिके संग ही स्वर्ग में आनन्द भोगती है ॥ ३५ ॥

यह पाराशरीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में ४ चौथा अध्याय पूरा हुआ।

भेड़िया, कुत्ता, गीदड़, आदि जिस ब्राह्मण को काटें वह स्नान करके वेदों की माता पवित्र गायत्री का जप करे ॥ १ ॥ कुत्ता जिसे काटे वह गौ के सींग के जल द्वारा स्नान से वा गङ्गादि महानदियों के सङ्गम में स्नान करने

वेदविद्याव्रतस्नातः शुनादष्टोद्विजोयदि ।
सहिरण्योदकेस्नात्वा घृतंप्राश्यविशुद्ध्यति ॥ ३ ॥
सव्रतस्तुशुनादष्टस्त्रिरात्रंसमुपोषितः ।
घृतंकुशोदकंपीत्वा व्रतशेषंसमापयेत् ॥ ४ ॥
अव्रतःसव्रतोवापि शुनादष्टोभवेद्द्विजः ।
प्रणिपत्यभवेत्पूतो विप्रैश्चक्षुर्निरीक्षितः ॥ ५ ॥
शुनाघ्राताऽवलीढस्य नखैर्विलिखितस्यच ।
अद्भिःप्रक्षालनंप्रोक्तमग्निनाचोपचूलनम् ॥ ६ ॥
ब्राह्मणीतुशुनादष्टा जम्बुकेनवृकेणवा ।
उदितंसोमनक्षत्रं दृष्ट्वासद्यःशुचिर्भवेत् ॥ ७ ॥
कृष्णपक्षेयदासोमो नदृश्येतकदाचन ।
यांदिशंव्रजतेसोमस्तांदिशंचाऽवलोकयेत् ॥ ८ ॥
असद्ब्राह्मणकेग्रामे शुनादष्टोद्विजोत्तमः ।
वृषंप्रदक्षिणीकृत्य सद्यःस्नात्वाशुचिर्भवेत् ॥ ९ ॥

से वा समुद्र के दर्शन से शुद्ध होता है ॥२॥ वेद विद्या पढ़ के वा ब्रह्मचर्य व्रत पूराकर के समावर्त्तन स्नान किये गृहस्थ ब्राह्मण को यदि कुत्ता काटे तो वह सुवर्ण सहित जल से स्नान कर और गोघृत खाके शुद्ध होता है ॥ ३ ॥ यदि व्रत-वाले ब्राह्मण को कुत्ता काटे तो तीन दिन रात उपवास करै फिर घृत और कुशों के जल को पीकर शेष व्रत को पूरा कर देवे ॥ ४ ॥ व्रत वाले वा विना व्रत -वाले कैसे ही ब्राह्मण को कुत्ता काटे तो ब्राह्मणों को प्रणिपात (नमस्कार) करने और तपस्वी ब्राह्मणों के देखने से शुद्ध होता है ॥ ५ ॥ जो वस्तु कुत्ते ने सूंघा वा चाटा हो, वा नखों से खोंदा हो वह जल से धोने और अग्नि में तपाने से शुद्ध होता है ॥ ६ ॥ यदि ब्राह्मणी को कुत्ता वा गीदड़ वा भेड़िया काटे तो उदय हुए चन्द्रमा और नक्षत्रों को देख कर शुद्ध होती है ॥ ७ ॥ यदि कृष्णपक्ष में कभी चन्द्रमा न दीखे तो जिस दिशा को चन्द्रमा उदय हो कर जाता है उस दिशा को देख लेवे ॥८॥ जिस में अन्य कोई ब्राह्मण न हों वा ब्रह्मतेज से हीन दुराचारी ब्राह्मण रहते हों ऐसे ग्राम में यदि ब्राह्मण को कुत्ता काटे

चण्डालेनश्वपाकेन गोभिर्विप्रैर्हतोयदि ।
आहिताग्निर्मृतोविप्रो विषेणात्महतोयदि ॥ १० ॥
दहेत्तं ब्राह्मणंविप्रो लोकाग्नौमन्त्रवर्जितम् ।
स्पृष्ट्वाचोह्यचदग्ध्वाच सपिण्डेषुचसर्वदा ॥ ११ ॥
प्राजापत्यंचरेत्पश्चाद्विप्राणामनुशासनात् ।
दग्ध्वास्थीनिपुनर्गृह्य क्षीरैःप्रक्षालयेद्द्विजः ॥ १२ ॥
स्वेनाऽग्निनास्वमन्त्रेण पृथगेतत्पुनर्दहेत् ।
आहिताग्निर्द्विजः कश्चित्प्रवसेत्कालचोदितः ॥ १३ ॥
देहनाशमनुप्राप्तस्तस्याऽग्निर्वसतेगृहे ।
प्रेताग्निहोत्रसंस्कारः श्रूयतांमुनिपुङ्गवाः ! ॥ १४ ॥
कृष्णाजिनंसमास्तीर्य कुशैस्तुपुरुषाकृतिम् ।
षट्शतानिशतञ्चैव पलाशानाञ्चवृन्तकम् ॥ १५ ॥
चत्वारिंशच्छिरेदद्यात्षष्टिंकण्ठेतुविन्यसेत् ।
बाहुभ्यांचशतंदद्यादङ्गुलीषुदशैवतु ॥ १६ ॥

तो शिव जी के वाहन बैल (नन्दी) की प्रदक्षिणा कर शीघ्र स्नान करके शुद्ध होता है ॥ ६ ॥ यदि किसी ब्राह्मण को चाण्डाल, श्वपाक (महतर की जाति डोम) गौ, वा ब्राह्मण मारडाले वा विष खाकर स्वयं मरजाय और वह आहिताग्नि नाम अग्निहोत्री होयतो ॥१०॥ उस ब्राह्मणका लौकिक अग्निसे ब्राह्मण मन्त्र वर्जित दाह करे । और यदि सपिण्ड के लोग उस का स्पर्श करें, श्मशान में ले जांय वा दाह करें तो क्रिया करने पश्चात् सदैव ॥ ११ ॥ ब्राह्मणों की आज्ञा से प्राजापत्य व्रत करें और उस के फूंके हुये हाड़ों को फिर बीन कर द्विज लोग दूध से धोवें ॥१२॥ फिर अपने अग्नि और अपनी शाखा के मन्त्र से दूसरी जगह विधि पूर्वक उस चाण्डालादि के हाथ से मरे ब्राह्मण के हड्डियों का दाह करें । यदि अग्निहोत्री ब्राह्मण परदेश में गया काल वश ॥१३ मरण को प्राप्त हो जाय और अग्नि उस के घर में विद्यमान होय तो हे मुनियो में श्रेष्ठ लोगो! उस प्रेत का वेदोक्त अन्त्येष्टि संस्कार तुम सुनो ॥ १४ ॥ कालीमृगछाला बिछाकर कुशाओं से पुरुष का आकार बनावे सातसौ ७०० ढांक के पत्ते डंडी सहित इस निम्न लिखित प्रकारसे उसमें लगावे ॥१५॥ चालीस शिरमें, साठ पत्ते कण्ठमें, दोनों भुजाओं

शतंचोरसिसंदद्याच्छतंचैवोदरेन्यसेत् ।
दद्यादष्टौवृषणयोः पञ्चमेढ्रेतुविन्यसेत् ॥ १७ ॥
एकविंशतिमूरुभ्यां जानुजङ्घेचविंशतिम् ।
पादाङ्गुल्योःशतार्द्धंच यज्ञपात्रंततोन्यसेत् ॥ १८ ॥
शम्यांशिश्नेविनिक्षिप्य अरणिंमुष्कयोरपि ।
जूहूञ्चदक्षिणेहस्ते वामेतूपभृतंन्यसेत् ॥ १९ ॥
कर्णेतूलूखलंदद्यात्पृष्ठेचमुसलंन्यसेत् ।
उरसिक्षिप्यदृषदं तण्डुलाज्यतिलान्मुखे ॥ २० ॥
श्रोत्रेचप्रोक्षणींदद्यादाज्यस्थालींचचक्षुषोः ।
कर्णनेत्रमुखेघ्राणे हिरण्यशकलंन्यसेत् ॥ २१ ॥
अग्निहोत्रोपकरणमशेषंतत्रविन्यसेत् ।
असौस्वर्गायलोकाय स्वाहेतिचघृताहुतिम् ॥ २२ ॥
दद्यात्पुत्रोऽथवाभ्राताप्यन्योवापिचबान्धवः ।

में सौ २ पत्ते और दश२ (पचास) पत्ते हाथों तथा अंगुलियों में लगावे ॥ १६ ॥ सौ पत्ते छाती में, सौ पत्ते उदर में और आठ पत्ते दोनों वृषणों (अण्डकोशों) में, और पांच मेढ्र (लिङ्ग) में, रक्खै ॥ १७ ॥ इकीस २ पत्ते घोंटू से ऊपर दोनों जाघों में, घोंटू से नीचे गोड़ों में वीश २ पत्ते, और पगों तथा पादों की अङ्गुलियों में पचास पत्ते रक्खे । फिर यज्ञ के पात्रों का विनियोग निम्न लिखित रीति से करे ॥ १८ ॥ शम्या नामक यज्ञ पात्र को लिंग पर, अरणी को अंडकोशों पर, दहिने हाथ पर जुहू को, बांयें हाथ में उपभृत् को रक्खै ॥१९॥ दहिने कान पर ऊखल को, पीठ पर मूसल को रक्खै, छाती पर दृषद् (हवि-ष्पीपने की शिल) तंडुल, घी, और तिल मुख पर रक्खे ॥ २० ॥ कान पर प्रोक्षणी पात्र, नेत्रों में आज्य स्थाली को रक्खै, कान, नेत्र, मुख, नाक, इन के छिद्रों में सुवर्ण के टुकड़े डाले ॥ २१ ॥ और अग्निहोत्र के शेष बचे सब औजार वहां चितापर रखदे फिर प्रज्वलिताग्नि में (असौस्वर्गाय लोकाय स्वाहा) इस मंत्र से घृतकी एक आहुति

यथादहनसंस्कारस्तथाकार्यंविचक्षणैः ॥ २३ ॥
ईदृशंतुविधिंकुर्याद् ब्रह्मलोकगतिःस्मृता ।
दहन्तियेद्विजास्तंतु तेयान्तिपरमांगतिम् ॥ २४ ॥
अन्यथाकुर्वतेकर्म स्वात्मबुद्धिप्रचोदिताः ।
भवन्त्यल्पायुषस्तेवै पतन्तिनरकेऽशुचौ ॥ २५ ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अतःपरंप्रवक्ष्यामि प्राणिहत्यासुनिष्कृतिम् ।
पराशरेणपूर्वोक्तां मन्वर्थेपिचविस्तृताम् ॥ १ ॥
क्रौञ्चसारसहंसांश्च चक्रवाकंचकुक्कुटम् ।
जालपादंचशरभं हत्वाऽहोरात्रतःशुचिः ॥ २ ॥
बलाकाटिट्टिभौवापि शुकपारावतावपि ।
अटीनवकघातीच शुद्ध्यतेनक्तभोजनात् ॥ ३ ॥

चिता पर छोड़े ॥ २२ ॥ पुत्र, भाई, अथवा अन्य कोई बांधव इस आहुति को देवे। फिर जैसे अग्नि से दाह करते हैं वैसे ही विद्वान् लोग सब कर्म करैं ॥ २३ ॥ जिस मृतक का ऐसे पूर्वोक्त विधान से दाह कर्म किया जाय उस को ब्रह्मलोक प्राप्त होता है और जो ब्राह्मणादि द्विज उस अग्निहोत्री का दाह करते हैं वे भी परमगति को प्राप्त होते हैं ॥ २४ ॥ जो लोग अपनी बुद्धि से अन्यथा शास्त्र विरुद्ध कर्म करते हैं वे अल्प अवस्था वाले होते हैं और अशुद्ध नरक में पड़ते हैं ॥ २५ ॥

यह पाराशरीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में पांचवां अध्याय पूरा हुआ ॥

यहां से प्राणियों की हत्याओं का प्रायश्चित्त कहते हैं। जो प्रथम महर्षि पाराशर ने कहा और जिसे मनु जी ने भी विस्तार से कहा है ॥ १ ॥ क्रौंच, सारस, हंस, चकवा, मुरगा, जालपाद [चीलह] शरभ (एक प्रकारका मृग) इनको मारकर एक दिन रात व्रत करने से शुद्ध होता है ॥ २ ॥ बलाका, टिट्टिभ, तोता, कबूतर, अटीन बक (जो बगला उड़ता फिरे) इन के मारने पर दिन भर व्रत कर रात्रि को भोजन करने से शुद्ध होता है ॥ ३ ॥ भेड़िया, कौआ, कपोत, सारी (पक्षिभेद) और

कृकवाकुकपोतानां सारीतित्तिरिघातकः ।
अन्तर्जलउभेसंध्ये प्राणायामेनशुद्ध्यति ॥ ४ ॥
गृध्रश्येनशशादीनामुलूकस्यचघातकः ।
अपक्वाशीदिनंतिष्ठे-त्त्रिकालंमारुताशनः ॥ ५ ॥
वल्गुलीचटकानांच कोकिलाखञ्जरीटकान् ।
लावकान्रक्तपादांश्च शुद्ध्यतेनक्तभोजनात् ॥ ६ ॥
कारण्डवचकोराणां पिङ्गलाकुररस्यच ।
भारद्वाजादिकंहत्वा शिवंसंपूज्यशुद्ध्यति ॥ ७ ॥
भेरुण्डचापभासांश्च पारावतकपिञ्जलौ ।
पक्षिणांचैवसर्वेषामहोरात्रमभोजनम् ॥ ८ ॥
हत्वामूषकमार्जारसर्पाऽजगरडुण्डुभान् ।
कृसरंभोजयेद्विप्रान् लोहदण्डंचदक्षिणाम् ॥ ९ ॥
शिशुमारंतथागोधां हत्वाकूर्मञ्चशल्लकम् ।
वृन्ताकफलभक्षीवाऽप्यहोरात्रेणशुद्ध्यति ॥ १० ॥

तीतर इन को जो मारे वह दोनों संध्याओं (प्रातःकाल और सायंकाल) में जल के भीतर प्राणायाम करने से शुद्ध होता है ॥ ४ ॥ गीध, बाज, खरहा, और उल्लू इनको जो मारे वह दिनभर पकाया अन्न न खावे किन्तु तीनों काल वायु भक्षण करता हुआ खड़ा रहे ॥ ५ ॥ वल्गुली, चटका, कोइल, खंजरीट, (खंजन) लावक (लवा) रक्त पग वाले इन पक्षियों को मार कर दिन को जपादिव्रत तथा रात को भोजन करने से शुद्ध होता है ॥ ६ ॥ कारंडव (हंस का भेद) चकोर, पिंगला, (छोटा उल्लू) कुरर (कुररी) भारद्वाज (च्याघाट) आदि को मार कर शिव जी का पूजन करने से शुद्ध होता है ॥ ७ ॥ भेरुन्ड (भुरड) पपीहा, भासे, पारावत, कपिंजल, और अन्य सब पक्षियों को मार कर एक दिन रात भोजन न करै ॥ ८ ॥ मूसा, बिलाव, सांप, अजगर और-डुंडुभ, को मारने वाला ब्राह्मणों को खिचड़ी जिमाकर लोहे का डंडा दक्षिणा में देवे ॥ ९ ॥ शिशुमार, गोह, कछुआ, सेही, इनको जो मारे वह और जो बैंगन खाय वह एक दिन रात व्रत उपवास करने से शुद्ध होता है ॥१०॥ भेड़िया

वृकजम्बुकऋक्षाणां तरक्षूणांचघातकः ।
तिलप्रस्थंद्विजेदद्याद्वायुभक्षोदिनत्रयम् ॥ ११ ॥
गजस्यचतुरङ्गस्य महिषोष्ट्रनिपातने ।
प्रायश्चित्तमहोरात्रंत्रिसंध्यमवगाहनम् ॥ १२ ॥
कुरङ्गंवानरंसिंहं चित्रंव्याघ्रञ्चघातयन् ।
शुद्ध्यतेसत्रिरात्रेण विप्राणांतर्पणेनच ॥ १३ ॥
मृगरोहिद्वराहाणामवेर्वस्तस्यघातकः ।
अफालकृष्टमश्नीयादहोरात्रमुपोष्यसः ॥ १४ ॥
एवंचतुष्पदानांच सर्वेषांवनचारिणाम् ।
अहोरात्रोषितस्तिष्ठेज्जपन्वैजातवेदसम् ॥ १५ ॥
शिल्पिनंकारुकंशूद्रं स्त्रियंवायस्तुघातयेत् ।
प्राजापत्यद्वयंकृत्वा वृषैकादशदक्षिणा ॥ १६ ॥
वैश्यंवाक्षत्रियंवापि निर्दोषंयोऽभिघातयेत् ।
सोऽतिकृच्छ्रद्वयंकुर्य्याद्‌ गोविंशंदक्षिणांददेत् ॥ १७ ॥

गीदड़, रीछ, तरक्षु (चीता) इन को जो मारे वह ब्राह्मण को एक सेर भर तिल देवे और तीन दिन वायु मात्र का भक्षण करे अर्थात् उपवास करे ॥ ११ ॥ हाथी, घोड़ा, भैंसा, ऊंट, इन को जो मारे वह एक दिन रात उपवास करे और त्रिकाल स्नान करै ॥ १२ ॥ कुरंग मृग, वानर, सिंह, चीता, वाघ, इनको जो मारे वह तीन दिन रात व्रत करने और ब्राह्मणों को भोजन कराने से शुद्ध होता है ॥ १३ ॥ हरिण, लालमृग, सूकर, भेड़ वकरा, इन को जो मारे वह एक दिन रात उपवास करके उस अन्न को खाय जो विना जोते पैदा हुआ हो ॥ १४ ॥ इसी प्रकार सब चौपाये और सब वनके विचरने वाले जीवों को मार कर जातवेदस अग्नि के मंत्र का जप करता हुआ एक दिन रात खड़ा रह के उपवास करे ॥ १५ ॥ शिल्पी [चित्रकार] कारीगर, शूद्र, और स्त्री इन को जो मार डाले वह वारह २ दिन के दो प्राजापत्य व्रत करके दश गौ ११वां बैल दक्षिणा में देवे ॥ १६ ॥ निर्दोष वैश्य वा क्षत्रिय को जो मार डाले वह दो अतिकृच्छ्र व्रत करै और बीस गौ दक्षिणा में देवे ॥ १७ ॥ शुभ कर्म में तत्पर वैश्य वा शूद्र

वैश्यंशूद्रंक्रियासक्तं विकर्मस्थंद्विजोत्तमम् ।
हत्वाचान्द्रायणंकुर्यात् त्रिंशद्गाश्चैवदक्षिणा ॥१८॥
चाण्डालंहतवान्कश्चिद् ब्राह्मणोयदिकञ्चन ।
प्राजापत्यंचरेत्कृच्छ्रं गोद्वयंदक्षिणांददेत् ॥ १९ ॥
क्षत्रियेणापिवैश्येन शूद्रेणैवेतरेणच ।
चाण्डालेवधसंप्राप्ते कृच्छ्रार्द्धेनविशुद्ध्यति ॥ २० ॥
चौरःश्वपाकश्चाण्डालो विप्रेणाभिहतोयदि ।
अहोरात्रोषितःस्नात्वा पञ्चगव्येनशुद्ध्यति ॥ २१ ॥
श्वपाकंचापिचाण्डालं विप्रःसंभाषतेयदि ।
द्विजैःसंभाषणंकुर्यात्सावित्रींचसकृज्जपेत् ॥ २२ ॥
चाण्डालैःसहसुप्तं तु त्रिरात्रमुपवासयेत् ।
चाण्डालैकपथंगत्वा गायत्रीस्मरणाच्छुचिः ॥ २३ ॥
चाण्डालदर्शनेसद्य आदित्यमवलोकयेत् ।
चाण्डालस्पर्शनेचैव सचैलंस्नानमाचरेत् ॥ २४ ॥

को और निन्दित कर्म करने वाले ब्राह्मण को जो मार डाले वह चांद्रायण व्रत करै और ३० गौ दक्षिणा में देवे ॥ १८ ॥ यदि कोई ब्राह्मण किसी चाण्डाल को मार डाले तो कृच्छ्र प्राजापत्य व्रत करै और दो गौ दक्षिणा में देवे ॥ १९ ॥ यदि क्षत्रिय वैश्य वा शूद्र वा अन्य कोई वर्णसंकर ये चाण्डाल को मार डालें तो आधा कृच्छ्र व्रत करनेसे शुद्ध होते हैं ॥ २० ॥ यदि किसी ब्राह्मण ने चौर, श्वपाक, चांडाल इन को मार डाला हो तो एक दिन रात उपवास पूर्वक स्नान करके पञ्चगव्य पीने से शुद्ध होता है ॥२१॥ यदि श्वपाक और चांडाल इन के संग ब्राह्मण संभाषण करे तो ब्राह्मणों के साथ संभाषण करके एक वार गायत्री जपै ॥ २२ ॥ जो ब्राह्मण चाण्डाल के संग सोवे तो तीन दिन उपवास करने से और चांडाल के संग एक मार्ग में चलै तो गायत्री के स्मरण से शुद्ध होता है ॥ २३ ॥ चाण्डाल का दर्शन करे तो शीघ्र ही सूर्य का दर्शन करै और चांडाल का स्पर्श करे तो सचैल [वस्त्रों सहित] स्नान करे ॥ २४ ॥

चाण्डालखातवापीषु पीत्वासलिलमग्रजः ।
अज्ञानाच्चैकनक्तेन त्वहोरात्रेणशुद्ध्यति ॥ २५ ॥
चाण्डालभाण्डसंस्पृष्टं पीत्वाकूपगतंजलम् ।
गोमूत्रयावकाहारस्त्रिरात्राच्छुद्धिमाप्नुयात् ॥ २६ ॥
चाण्डालघटसंस्थंतु यत्तोयंपिबतिद्विजः ।
तत्क्षणात्क्षिपतेयस्तु प्राजापत्यंसमाचरेत् ॥ २७ ॥
यदिनक्षिपतेतोयं शरीरेयस्यजीर्यति ।
प्राजापत्यंनदातव्यं कृच्छ्रं सांतपनंचरेत् ॥ २८ ॥
चरेत्सांतपनंविप्रः प्राजापत्यंतुक्षत्रियः ।
तदर्धंतुचरेद्वैश्यः पादंशूद्रस्यदापयेत् ॥ २९ ॥
भाण्डस्थमन्त्यजानांतु जलंदधिपयःपिबेत् ।
ब्राह्मणःक्षत्रियोवैश्यः शूद्रश्चैवप्रमादतः ॥ ३० ॥
ब्रह्मकूर्चोपवासेन द्विजातीनांतुनिष्कृतिः ।
शूद्रस्यचोपवासेन तथादानेनशक्तितः ॥ ३१ ॥

चाण्डाल की खोदी वावड़ी वा कुआ में अज्ञान से ब्राह्मण जल पीवे तो एक रात भर और जान कर पीवे तो एक दिन रात व्रत करने से शुद्ध होता है ॥ २५ ॥ जिस कूप में चाण्डाल के वर्त्तन का स्पर्श हुआ हो उस कुए का जल पिया हो तो गोमूत्र और कुलत्थ को खाकर एक दिन रात व्रत करने से शुद्ध होता है ॥ २६ ॥ यदि चांडाल के घट का जल ब्राह्मण पीलेवे और उस जल को उसी क्षण में वमन करदे तो एक प्राजापत्य व्रत करे ॥ २७ यदि वमन न करदे और उस जलको पचाजाय तो प्राजापत्य न करै किन्तु सांतपन कृच्छ्र व्रत करे ॥ २८ ॥ ब्राह्मण कृच्छ्र सांतपन व्रत, क्षत्रिय प्राजापत्य, वैश्य आधा प्राजापत्य और शूद्र चौथाई प्राजापत्य व्रत करे ॥ २९ ॥ यदि अन्त्यजों के पात्र में रक्खा जल, दही, दूध, ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य वा शूद्र भूल करके पी लेवें तो ॥ ३० ॥ इसी पुस्तक के अ० ११ में कहे व्रत के ब्रह्मकूर्च उपवास से द्विजातियों की और एक उपवास तथा यथाशक्ति किये दान से शूद्र की शुद्धि होती है ॥ ३१ ॥ यदि किसी प्रकार अज्ञान से ब्राह्मण चांडाल के अन्नको खालेवे तो गोमूत्र

भुङ्क्तेऽज्ञानाद्द्विजश्रेष्ठःचाण्डालान्नंकथंचन ।
गोमूत्रयावकाहारो दशरात्रेणशुद्ध्यति ॥ ३२ ॥
एकैकंग्रासमश्नीयाद् गोमूत्रयावकस्यच ।
दशाहंनियमस्थस्य व्रतंतत्तुविनिर्द्दिशेत् ॥ ३३ ॥
अविज्ञातस्तुचाण्डालो यत्रवेश्मनितिष्ठति ।
विज्ञातउपसंन्यस्य द्विजाःकुर्युरनुग्रहम् ॥ ३४ ॥
मुनिवक्त्रोद्गतान्धर्मान् गायन्तोवेदपारगाः ।
पतन्तमुद्धरेयुस्तं धर्मज्ञाःपापसंकटात् ॥ ३५ ॥
दध्नाचसर्पिषाचैव क्षीरगोमूत्रयावकम् ।
भुञ्जीतसहभृत्यैश्च त्रिसंध्यमवगाहनम् ॥ ३६ ॥
त्र्यहंभुञ्जीतदध्नाच त्र्यहंभुञ्जीतसर्पिषा ।
त्र्यहंक्षीरेणभुञ्जीत एकैकेनदिनत्रयम् ॥ ३७ ॥
भावदुष्टंनभुञ्जीत नोच्छिष्टंकृमिदूषितम् ।
दधिक्षीरस्यत्रिपलं पलमेकंघृतस्यतु ॥ ३८ ॥

और कुलत्थ को खाकर दश दिन में शुद्ध होता है ॥ ३२ ॥ और गोमूत्र में कुलत्थ को मिलाकर दश दिन तक एक २ ग्रास खाय और नियमसे रहे यही व्रत उस ब्राह्मण के लिये बताना चाहिये ॥ ३३ ॥ यदि बिना जाने कोई चांडाल द्विजों के घर में ठहरे तो जान लेने पर उसे निकाल कर द्विज ब्राह्मण लोग उस ब्राह्मण पर दया कर उसे शुद्ध करें ॥ ३४ ॥ मुनियों के मुख से निकसे धर्मों को गाते हुये वेद के पार पहुंचे हुए धर्म के ज्ञाता विद्वान् लोग पतित हुए उस ब्राह्मण को प्रायश्चित्त कराके पाप संकट से उद्धार करें ॥ ३५ ॥ वह ब्राह्मण जिस के घर में अज्ञात चाण्डाल मिल जुल के रहा हो दही, घी, दूध, गोमूत्र, और कुलत्थ इन को भृत्यों और स्त्री पुत्रादि के सङ्ग निम्न प्रकार से खावे और त्रिकाल स्नान करै ॥ ३६ ॥ तीन दिन दही से, तीन दिन दूध से (यावक) नाम कुलमाष- (कुलथी) खावे और तीन दिन एक २ दही आदि खावे ॥ ३७ ॥ जिस में कोई दोषा-रोपण हो गया हो वा दूषित होनेकी शंका होगई हो, जो किसी का झूठा हो, जिसमें कृमि पड़ गये हों, उसे न खावे । दही और घी ऊपर कहे व्रतमें तीन २ पल (अर्थात् चार तोलाका एक पल होता तब १२ तोले के तीन पल हुए) और घी एक पल खावे ॥३८॥

भस्मनातुभवेच्छुद्धिरुभयोःकांस्यताम्रयोः ।
जलशौचेनवस्त्राणां परित्यागेनमृन्मयम् ॥ ३९ ॥
कुसुम्भगुडकार्पास-लवणंतैलसर्पिषी ।
द्वारेकृत्वातुधान्यानि दद्याद्वेश्मनिपावकम् ॥ ४० ॥
एवंशुद्धस्ततःपश्चात् कुर्याद्ब्राह्मणतर्पणम् ।
त्रिंशतंगावृषंचैकं दद्याद्विप्रेषुदक्षिणाम् ॥ ४१ ॥
पुनर्लेपनखातेन होमजाप्येनशुद्ध्यति ।
आधारेणचविप्राणां भूमिदोषोनविद्यते ॥ ४२ ॥
चाण्डालैःसहसंपर्कं मासंमासार्द्धमेववा ।
गोमूत्रयावकाहारो मासार्द्धेनविशुद्ध्यति ॥ ४३ ॥
रजकीचर्मकारीच लुब्धकीवेणुजीविनी ।
चातुर्वर्ण्यस्यतुगृहे त्वविज्ञातानुतिष्ठति ॥ ४४ ॥
ज्ञात्वातुनिष्कृतिंकुर्यात् पूर्वोक्तस्यार्द्धमेवतु ।
गृहदाहंनकुर्वीत शेषंसर्वंचकारयेत् ॥ ४५ ॥

जिसके घरमें चाण्डाल रह चुका हो उस घरके कांसे और तांवेके पात्रोंकी शुद्धि भस्म से, जलमें धोनेसे वस्त्रोंकी शुद्धि होती और मट्टीके पात्र अशुद्ध हों तो त्याग देनेचाहिये ॥ ३९ ॥ फिर घर के द्वारपर कुसुम, गुड़, कपास, लवण, तेल घी अन्न इनको निकाल कर घर में अग्नि लगा देवे ॥ ४० ॥ इस प्रकार शुद्ध होकर ब्राह्मणों को भोजन कराके तृप्त करै और तीनसौ गौ एक बैल ब्राह्मणों को दक्षिणा देवे ॥ ४१ ॥ दुवारा लीपना, खोदना, होम, जप, और ब्राह्मणों के बैठने से पृथ्वी शुद्ध होती है फिर उस भूमि में कुछ दोष नहीं रहता ॥४२॥ यदि चाण्डालोंके संग एक महीना वा पन्द्रह दिन संसर्ग रहे तो पन्द्रह १५ दिन तक गोमूत्र और कुलथी खाकर शुद्ध होता है ॥ ४३ ॥ रजकी (धोबिन) चमारी, व्याधनी, बांस के पात्र बना के जीविका करने वाले की स्त्री, ये यदि अज्ञान से चारों वर्णों के घर में निवास करें तो ॥ ४४ ॥ जानने पीछे पूर्वोक्त का आधा प्रायश्चित्त करै घर को जलावे नहीं शेष सब कृत्य आधा करै ॥४५॥

गृहस्याभ्यन्तरंगच्छेच्चाण्डालोयदिकस्यचित् ।
तमागाराद्विनिःसार्य मृद्भाण्डंतुविसर्जयेत् ॥ ४६ ॥
रसपूर्णंतुमृद्भाण्डं नत्यजेत्तुकदाचन ।
गोमयेनतुसंमिश्रैर्जलैःप्रोक्षेद्गृहंतथा ॥ ४७ ॥
ब्राह्मणस्यव्रणद्वारे पूयशोणितसंभवे ।
कृमिरुत्पद्यतेयस्य प्रायश्चित्तंकथंभवेत् ॥ ४८ ॥
गवांमूत्रपुरीषेण दध्नाक्षीरेणसर्पिषा ।
त्र्यहंस्नात्वाचपीत्वाच कृमिदष्टःशुचिर्भवेत् ॥ ४९ ॥
क्षत्रियोऽपिसुवर्णस्य पञ्चमाषान्प्रदायतु ।
गोदक्षिणांतुवैश्यस्याप्युपवासंविनिर्दिशेत् ॥ ५० ॥
शूद्राणांनोपवासः स्याच्छूद्रोदानेनशुद्ध्यति ।
ब्राह्मणांस्तुनमस्कृत्य पञ्चगव्येनशुध्यति ॥ ५१ ॥
अच्छिद्रमितियद्वाक्यं वदन्तिक्षितिदेवताः ।
प्रणम्यशिरसाग्राह्य-मग्निष्टोमफलंहितत् ॥ ५२ ॥

यदि किसी के घर के भीतर चांडाल चला जाय तो उस को घर से बाहर निकाल कर मिट्टी के पात्रों को फेंक देवे ॥ ४६ ॥ परन्तु रस के भरे मिट्टी के पात्रों को कदापि न त्यागै और गोबर मिले जलसे घर को लीपे वा छिड़के ॥४५॥ राध (पीव) और रुधिर से भरे ब्राह्मणके घाव में यदि कृमि (कीड़े) पड़ जांय तो प्रायश्चित्त कैसे हो सो कहते हैं ॥ ४८ ॥ गोमूत्र, गोबर, गोदही गोदूध गोघृत इनको मिला कर तीन दिन स्नान और इन को तीन दिन पीकर वह कीड़ों का काटा हुआ पुरुष शुद्ध होता है ॥ ४९ ॥ क्षत्रिय के घाव में यदि कृमि पड़ गये हों तो पांच मासे सुवर्ण का दान देवे । वैश्य एक गौ की दक्षिणा देवे और एक उपवास करे तब शुद्ध होता है ॥ ५० ॥ शूद्रों को उपवास का निषेध है इस से शूद्र दान से शुद्ध होता है । शूद्र दान देने पश्चात् ब्राह्मणों को प्रणाम कर और पञ्चगव्य का प्राशन करने से शुद्ध होता है ॥ ५१ ॥ जिस काम को ब्राह्मणलोग (अच्छिद्रमस्तु) ऐसा कहदेवें उस वाक्य को सब लोग शिरोधार्य मान कर ग्रहण करैं क्योंकि उस से अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है ॥ ५२ ॥ जप का छिद्र तप का छिद्र और यज्ञ कर्म का छिद्र नाम जो

जपच्छिद्रं तपश्छिद्रं यच्छिद्रंयज्ञकर्मणि ।
सर्वंभवतिनिश्छिद्रं ब्राह्मणैरुपपादितम् ॥ ५३ ॥
व्याधिव्यसनिनिश्रान्ते दुर्भिक्षेडामरेतथा ।
उपवासोव्रतोहोमो द्विजसंपादितानिवै ॥ ५४ ॥
अथवाब्राह्मणास्तुष्टाः सर्वंकुर्वन्त्यनुग्रहम् ।
सर्वान्कामानवाप्नोति द्विजैःसंवर्धिताशिषा ॥ ५५ ॥
दुर्बलानुग्रहःप्रोक्तस्तथावैबालवृद्धयोः ।
ततोऽन्यथाभवेद्दोषस्तस्मान्नानुग्रहःस्मृतः ॥ ५६ ॥
स्नेहाद्वायदिवालोभाद्भयादज्ञानतोऽपिवा ।
कुर्वन्त्यनुग्रहंयेतु तत्पापंतेषुगच्छति ॥ ५७ ॥
शरीरस्याऽत्ययेप्राप्ते वदन्तिनियमंतुये ।
महत्कार्योपरोधेन नस्वस्थस्यकदाचन ॥ ५८ ॥
स्वस्थस्यमूढाःकुर्वन्ति नियमंतुवदन्तिये ।
तेतस्यविघ्नकर्त्तारः पतन्तिनरकेऽशुचौ ॥ ५९ ॥

कुछ त्रुटि है तपस्वी ब्राह्मणों के कहने से वह सब छिद्र रहित हो जाता है ॥ ५३ ॥ यदि शूद्र मनुष्य व्याधियों से वा किसी दुर्व्यसन से पीड़ित दुःखित हो, वा दुर्भिक्ष से पीड़ित हो, वा लूट लड़ाई आदि से दुःखित हो तो उपवास, व्रत, और होम सुपात्र ब्राह्मण द्वारा करावे ॥ ५४ ॥ अथवा प्रसन्न संतुष्ट हुए सब ब्राह्मण लोग अनुग्रह (कृपा) करते हैं। अर्थात् ब्राह्मणों के आशीर्वाद से बढ़ा हुआ वह शूद्र सब कामनाओं को प्राप्त होता है ॥ ५५ ॥ निर्बल (असमर्थ), बालक, और वृद्ध इन पर अनुग्रह करना चाहिये अर्थात् अत्यल्प प्रायश्चित्त इनसे न कराना चाहिये। यदि इनसे भिन्न मनुष्यों पर अनुग्रह किया जाय अर्थात् ठीक प्रायश्चित्त न कराया जाय तो ठीक नहीं है। ५६ ॥ उस को अनुग्रह नहीं कहते जो स्नेह से, भय से, लोभ से अथवा अज्ञानसे ब्राह्मण लोग किसी पर अनुग्रह करते हैं तो अपराधी का पाप उन को ही लगता है। ॥ ५७ ॥ जो ब्राह्मण लोग प्राणनाश की सम्भावना होने पर भी प्रायश्चित्त का विधान करते, और बड़े महान् कामोंकी हानि होने के विचार से स्वस्थ पुरुष को नियम पालन का निषेध करते हैं ॥ ५८ ॥ तथा जो मूढ़ लोग स्वस्थ पुरुष के पालनीय नियम को लोभादि से स्वयं पालन करते वा कहते हैं। वे सब उस के कार्य में विघ्न करने वाले होने से अपवित्र नरक में पड़ते हैं ॥ ५९ ॥ जो पुरुष विद्वानों से पूछे बिना आप ही

स्वयमेवव्रतंकृत्वा ब्राह्मणंयोऽवमन्यते ।
वृथातस्योपवासःस्यान्नसपुण्येनयुज्यते ॥ ६० ॥
सएवनियमोग्राह्यो यमेकोऽपिवदेद्द्विजः ।
कुर्याद्वाक्यंद्विजानांतु अन्यथाभ्रूणहाभवेत् ॥ ६१ ॥
ब्राह्मणाजङ्गमंतीर्थं तीर्थभूताहिसाधवः ।
तेषांवाक्योदकेनैव शुद्ध्यन्तिमलिनाजनाः ॥ ६२ ॥
ब्राह्मणायानिभाषन्ते मन्यन्तेतानिदेवताः ।
सर्वदेवमयोविप्रो नतद्वचनमन्यथा ॥ ६३ ॥
उपवासोव्रतंचैव स्नानंतीर्थंजपस्तपः ।
विप्रैःसंपादितंयस्य संपूर्णंतस्यतद्भवेत् ॥ ६४ ॥
अन्नाद्येकीटसंयुक्ते मक्षिकाकेशदूषिते ।
तदन्तरास्पृशेच्चापस्तदन्नंभस्मनास्पृशेत् ॥ ६५ ॥
भुञ्जानश्चैवयोविप्रः पादंहस्तेनसंस्पृशेत् ।
समुच्छिष्टमसौभुङ्क्ते योभुङ्क्तेभुक्तभाजने ॥ ६६ ॥

व्रत करके ब्राह्मणों का तिरस्कार करता है । उस का उपवास वृथा है और उसे पुण्य फल प्राप्त नहीं होता ॥ ६० ॥ इससे वही नियम ग्रहण करना योग्य है जिसे एक भी धार्मिक ब्राह्मण कहै । और ब्राह्मणके वचन को अवश्य स्वीकार करे यदि न करेगा तो भ्रूणहत्या का दोष लगता है ॥ ६१ ॥ क्योंकि ब्राह्मण लोग जंगम (चेतन) तीर्थ हैं और साधु (सीधे) शुद्ध निर्विकार ब्राह्मण लोग) भी तीर्थ रूप ही होते हैं। उन ब्राह्मणों के वाक्य रूप जल से ही मलिन पुरुष शुद्ध हो जाते हैं ॥ ६२ ॥ ब्राह्मण लोग जिन धर्मयुक्त वाक्योंको कहते हैं उन्हें देवता भी मानते हैं । धर्मनिष्ठ ब्राह्मण सर्व देवताओं का रूप है इस से उस का वचन अन्यथा नहीं हो सकता ॥ ६३ ॥ उपवास व्रत स्नान तीर्थयात्रा जप तप ये सब जिस के ब्राह्मण ने संपादन (अनुमोदन) कर दिये उस को ही इन का ठीक फल होता है ॥ ६४ ॥ यदि पकाये हुये अन्न में कीड़े मिल गये हों वा वह भोज्यान्न मक्खी और केशों से दूषित हो गया हो तो कीड़ा, मक्खी केशादि को निकाल के उस के बीच २ जल से धोकर शुद्ध करे और उस अन्न का भस्म से स्पर्श करे ॥६५॥ जो भोजन करता हुआ ब्राह्मण पग को दहिने हाथ से छलेवे तो अथवा किसी के जूंठे पात्र में भोजन करे तो उसका उच्छिष्ट भोजन करना

पादुकास्थोनभुञ्जीत पर्यङ्कस्थःस्थितोऽपिवा ।
चाण्डालेनशुनादृष्टं भोजनंपरिवर्जयेत् ॥ ६७ ॥
यदन्नंप्रतिषिद्धंस्यादन्नशुद्धिस्तथैवच ।
यथापराशरेणोक्तं तथैवाहंवदामिवः ॥ ६८ ॥
शृतंद्रोणाढकस्यान्नं काकश्वानोपघातितम् ।
केनेदंशुद्ध्यतेचेति ब्राह्मणेभ्योनिवेदयेत् ॥ ६९ ॥
काकश्वानावलीढंतु द्रोणान्नंनपरित्यजेत् ।
वेदवेदाङ्गविद्विप्रैर्धर्मशास्त्रानुपालकैः ॥ ७० ॥
प्रस्थाद्द्वाविंशतिर्द्रोणः स्मृतो द्विप्रस्थआढकः ।
ततोद्रोणाऽढकस्यान्नं श्रुतिस्मृतिविदोविदुः ॥ ७१ ॥
काकश्वानावलीढंतु गवाघ्रातंखरेणवा ।
स्वल्पमन्नंत्यजेद्विप्रः शुद्धिर्द्रोणाढकेभवेत् ॥ ७२ ॥
अन्नस्योद्धृत्यतन्मात्रं यच्चलालाहतंभवेत् ।
सुवर्णोदकमभ्युक्ष्य हुताशेनैवतापयेत् ॥ ७३ ॥

जानो ॥ ६६ ॥ खड़ाम् पर बैठ कर वा खाट अथवा बिस्तरे पर बैठ कर अथवा खड़ा होकर भोजन न करे। कुत्ते और चांडाल के देखे हुये भोजन को त्याग देवे ॥ ६७॥ जो कोई अन्न निषिद्ध है वा जिस किसी अन्न की शुद्धि हो सकती है। व्यास जी कहते हैं कि इस उक्त विषयमें महर्षि पराशर ने जैसा विचार कहा है वैसा हम कहते हैं ॥ ६८ ॥ द्रोण वा आढक भर पकाये अन्न को यदि कौआ वा कुत्ता बिगाड़ देवे तो यह अन्न कैसे शुद्ध हो ऐसा ब्राह्मणों से कहे ॥ ६९ ॥ उस समय धर्मशास्त्रकी मर्यादा के रक्षक और वेद वेदाङ्ग के जानने वाले ब्राह्मण लोग यह आज्ञा देवें कि काक वा कुत्ते ने बिगाड़े द्रोण भर अन्न को न त्यागे ॥ ७० ॥ बाईस प्रस्थ (अंजली) का एक द्रोण और दो प्रस्थ का एक आढक कहाता है। तिस से श्रुति स्मृति के ज्ञाता विद्वान् लोग द्रोणान्न तथा आढकान्न को शुद्ध मानते हैं ॥ ७१ ॥ यदि कौआ वा कुत्ता ने चाटा और गौ वा गधे ने सूंघा थोड़ा अन्न हो तो त्याग देवे और वह पकाया अन्न द्रोण वा आढक भर होतो उस की शुद्धि हो सकती है ॥ ७२ ॥ जितने अन्न में कौवे आदि का मुख लगा हो वा जितने में लार गिरी हो उतना निकाल देने बाद सुवर्ण के जल से छिड़क कर अग्नि से तपावे तब शुद्ध होजाता है ॥ ७३ ॥ क्योंकि जिस

हुताशनेनसंस्पृष्टं सुवर्णसलिलेनच ।
विप्राणांब्रह्मघोषेण भोज्यंभवतितत्क्षणात् ॥ ७४ ॥
स्नेहोवागोरसोवाऽपि तत्रशुद्धिःकथंभवेत् ।
अल्पंपरित्यजेत्तत्र स्नेहस्योत्पवनेनच ॥
अनलज्वालयाशुद्धिर्गोरसस्यविधीयते ॥ ७५ ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अथातोद्रव्यशुद्धिस्तु पराशरवचोयथा ।
दारवाणान्तुपात्राणां तत्क्षणाच्छुद्धिरिष्यते ॥ १ ॥
मार्जनाद्यज्ञपात्राणां पाणिनायज्ञकर्मणि ।
चमसानांग्रहाणांच शुद्धिःप्रक्षालनेनच ॥ २ ॥
चरूणांस्रुक्स्रुवाणाञ्च शुद्धिरुष्णेनवारिणा ।
भस्मनाशुद्ध्यतेकांस्यं ताम्रमम्लेनशुद्ध्यति ॥ ३ ॥
रजसाशुद्ध्यतेनारी विकलंयानगच्छति ।
नदीवेगेनशुद्ध्येत लेपोयदिनदृश्यते ॥ ४ ॥

अन्न में अग्नि का और सुवर्ण के जल का स्पर्श होता है उससे तथा ब्राह्मणों के वेद पाठ की ध्वनि से वह अन्न उसी समय खाने योग्य शुद्ध हो जाता है ॥ ७४ ॥ यदि स्नेह (घी आदि) हो वा गोरस (दूध आदि) होय तो उस की शुद्धि कैसे हो ? उस में से थोड़ा सा निकाल देवे और घी आदि स्नेह को छान लेवे और दूध को अग्नि की ज्वाला से तपा लेने से शुद्धि कही है ॥ ७५ ॥

यह पाराशरीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में छठा अध्याय पूरा हुआ ॥६॥

अब महर्षि पराशर भगवान् के वचनानुसार द्रव्य की शुद्धि कहते हैं । काठके पात्रों की तो उसी समय शुद्धि हो सकती है ॥ १ ॥ यज्ञ कर्म में यज्ञ के पात्रों की शुद्धि हाथ से मांजने से होती, अग्निष्टोमादि सोमयाग के चमस और सोम ग्रहों की शुद्धि जल में धोने से होती है ॥२॥ चरुस्थाली, स्रुक्, स्रुवा, इन यज्ञपात्रों की उष्णजल से, कांसे के पात्र की भस्म से और तांबे के पात्र की खटाई से मांजने पर शुद्धि होती है ॥ ३ ॥ यदि स्त्री ने पर पुरुषसे व्यभिचार न किया हो किन्तु केवल मन से चलायमान हुई हो तो वह रजोदर्शन (मासिक धर्म होने) ही से शुद्ध हो जाती है और यदि नदी में कहीं अधिक मलिनता संलग्न न हो तो उस की साधारण

वापीकूपतडागेषु दूषितेषुकथञ्चन ।
उद्धृत्यवैकुम्भशतं पञ्चगव्येनशुद्ध्यति ॥ ५ ॥
अष्टवर्षाभवेद्गौरी नववर्षातुरोहिणी ।
दशवर्षाभवेत्कन्या तत‌ऊर्ध्वंरजस्वला ॥ ६ ॥
प्राप्तेतुद्वादशेवर्षे यःकन्यांनप्रयच्छति ।
मासिमासिरजस्तस्याः पिबन्तिपितरोऽनिशम् ॥७॥
माताचैवपिताचैव ज्येष्ठोभ्रातातथैवच ।
त्रयस्तेनरकंयान्ति दृष्ट्वाकन्यांरजस्वलाम् ॥ ८ ॥
यस्तांसमुद्वहेत्कन्यां ब्राह्मणोमदमोहितः ।
असंभाष्योह्यपाङ्क्तेयः सविप्रोवृषलीपतिः ॥ ९ ॥

अशुद्धि प्रवाह के वेग से शुद्ध हो जाती है ॥ ४ ॥ बावड़ी, कूप और तालाव यदि ये किसी प्रकार दूषित हो जांय तो उन में से सौ घड़े जल निकाल कर पंचगव्य गेरनेसे शुद्ध हो जाते हैं ॥ ५ ॥ आठ वर्ष की कन्या को गौरी, नौ वर्ष की रोहिणी, और दश वर्ष की को कन्या ही कहते हैं और दश वर्ष से ऊपर रजस्वला कोटि में गिनी जाती है ॥ ६ ॥ जो मनुष्य बारह वर्ष की कन्या का विवाह नहीं करता उसके पितर महीने २ में उस लड़की के रज को पीते हैं ॥७॥ माता, पिता, और जेठा भाई ये तीनों रजस्वला कन्या को देख २ कर नरक में जाते (पाप के भागी) होते हैं ॥८॥ जो ब्राह्मणादि मद से मोहित उस रजस्वला * कन्या के साथ विवाह करता है वह भी संभापण करने और पंक्ति में बैठाने योग्य नहीं क्योंकि वह स्वधर्म से पतित स्त्री

---

* रजो दर्शन होने से पहिले विवाह करे यह सभी धर्मशास्त्रों की राय से विधिवाक्य है । यदि अच्छा वर खोजने आदि में देर लगे और कन्या रजस्वला होने लगे तो पितादि को दोष नहीं लगता यह उक्त विधि का अपवाद माना जायगा । माता पितादि नरक में जाते हैं यह उक्त विधिवाक्य का निन्दार्थवाद है । जिसका मतलब यह है कि रजस्वला होने पर सन्तानोत्पत्ति की सम्भावना है उसमें बाधा पड़ती है । इस कारण माता पितादि को अपराध लगता है । विधि से विरुद्ध करने का निन्दार्थवाद विध्यनुकूल करनेकी आवश्यकता और उत्तमता दिखाने के लिये है । विधि विरुद्ध करना ही पाप है और वह नरक नाम दुःख विशेष का हेतु है ॥

यःकरोत्येकरात्रेण वृषलीसेवनाद्विजः ।
सभैक्ष्यभुग्जपन्नित्यं त्रिभिर्वर्षैर्विशुद्ध्यति ॥ १० ॥
अस्तंगतेयदासूर्ये चाण्डालंपतितंस्त्रियम् ।
सूतिकांस्पृशतेचैव कथंशुद्धिर्विधीयते ॥ ११ ॥
जातवेदंसुवर्णंच सोममार्गंविलोक्यच ।
ब्राह्मणानुगतश्चैव स्नानंकृत्वाविशुद्ध्यति ॥ १२ ॥
स्पृष्ट्वारजस्वलान्योन्यं ब्राह्मणीब्राह्मणींतथा ।
तावत्तिष्ठेन्निराहारा त्रिरात्रेणैवशुद्ध्यति ॥ १३ ॥
स्पृष्ट्वारजस्वलान्योन्यं ब्राह्मणीक्षत्रियांतथा ।
अर्द्धकृच्छ्रं चरेत्पूर्वा पादमेकन्त्वनन्तरा ॥ १४ ॥
स्पृष्ट्वारजस्वलान्योन्यं ब्राह्मणीवैश्यजांतथा ।
पादहीनंचरेत्पूर्वा पादमेकमनन्तरा ॥ १५ ॥
स्पृष्ट्वारजस्वलान्योन्यं ब्राह्मणीशूद्रजांतथा ।
कृच्छ्रेणशुद्ध्यतेपूर्वा शूद्रादानेनशुद्ध्यति ॥ १६ ॥

का पति है ॥ ९ ॥ जो द्विज ब्राह्मणादि पुरुष एक रात भर में जितना पाप वृषली (वेश्या) का सेवन करनेसे प्राप्त करता है वह भिक्षाका अन्न खाकर और जप करता हुआ तीन वर्ष तक किये प्रायश्चित्त से शुद्ध होता है ॥ १० ॥ यदि सूर्य के अस्त हो जाने पर चांडाल, पतित, और सूतिका स्त्री इनका स्पर्श करै तो कैसे शुद्धि कही है? सो कहते हैं ॥११॥ अग्नि, सुवर्ण और चन्द्रमा का मार्ग इनको देख कर और ब्राह्मणों की आज्ञा से स्नान करके शुद्ध होता है ॥ १२ ॥ यदि दो रजस्वला ब्राह्मणी परस्पर स्पर्श करें तो रजोदर्शन की समाप्ति तक निराहार रहैं तब रजो दर्शन के तीन ही दिन में शुद्ध होजाती हैं ॥ १३ ॥ यदि ब्राह्मणी और क्षत्रिया रजस्वला परस्पर छू जावें तो ब्राह्मणी अर्द्ध कृच्छ्र व्रत और क्षत्रिया चौथाई कृच्छ्र व्रत प्रायश्चित्त करै ॥ १४ ॥ यदि रजस्वला ब्राह्मणी और वैश्या परस्पर स्पर्श करलें तो ब्राह्मणी पौन कृच्छ्रव्रत और वैश्या चौथाई कृच्छ्र व्रत करे ॥१५॥ यदि रजस्वला ब्राह्मणी और शूद्रा परस्पर स्पर्श कर लें तो ब्राह्मणी एक कृच्छ्रसे और शूद्रा स्त्री दान करनेसे ही शुद्ध हो जाती है॥१६॥

स्नातारजस्वलायातु चतुर्थेऽहनिशुद्ध्यति ।
कुर्याद्रजोनिवृत्तौतु दैवपित्र्यादिकर्मच ॥ १७ ॥
रोगेणयद्रजःस्त्रीणामन्वहंतुप्रवर्त्तते ।
नाऽशुचिःसाततस्तेन तत्स्याद्वैकारिकंमलम् ॥ १८ ॥
साध्वाचारानतावत्स्याद्रजोयावत्प्रवर्त्तते ।
रजोनिवृत्तौगम्यास्त्री गृहकर्मणिचैवहि ॥ १९ ॥
प्रथमेऽहनिचाण्डाली द्वितीयेब्रह्मघातिनी ।
तृतीयेरजकीप्रोक्ता चतुर्थेऽहनिशुद्ध्यति ॥ २० ॥
आतुरेस्नानउत्पन्ने दशकृत्वोह्यनातुरः ।
स्नात्वास्नात्वास्पृशेदेनं ततःशुद्ध्येत्सआतुरः ॥२१॥
उच्छिष्टोच्छिष्टसंस्पृष्टः शुनाशूद्रेणवाद्विजः ।
उपोष्यरजनीमेकां पञ्चगव्येनशुद्ध्यति ॥ २२ ॥
अनुच्छिष्टेनशूद्रेण स्पर्शेस्नानंविधीयते ।
तेनोच्छिष्टेनसंस्पृष्टः प्राजापत्यंसमाचरेत् ॥ २३ ॥

जो रजस्वला स्त्री स्नान करके चौथे दिन शुद्ध होती है वह रज के निवृत्त होने पर देवता तथा पितृ आदि सम्बन्धी कर्मों में अपने पति के साथ संमिलित हो सकती है ॥ १७ ॥ जो रोग के कारण प्रतिदिन स्त्रियों के रजोधर्म होता है उस रज से वह स्त्री अशुद्ध नहीं होती क्योंकि वह मल रोग विकार जन्य माना गया है ॥१८॥ जब तक रजोदर्शन रहता है तब तक शुद्ध आचरण न करै रज की निवृत्ति होने पर ही स्त्री गृहस्थी के काम और संग करने योग्य होती है ॥ १६ ॥ पहिले दिन चांडाली के तुल्य अशुद्ध, दूसरे दिन ब्रह्महत्यारीके तुल्य, तीसरे दिन रजकी (धोविन) के तुल्य अशुद्ध जानना और चौथे दिन शुद्ध होती है ॥२०॥ यदि रोगीको स्नान करनेकी आवश्यकता हो और वह स्नान करने योग्य न हो तो नीरोग मनुष्य दशवार स्नान कर २ उस रोगी का स्पर्श करै तब वह स्नान किये के तुल्य शुद्ध हो जाता है ॥२१॥ यदि ब्राह्मण जूठन खाते हुए कुत्ते वा शूद्र का स्पर्श करले तो एक रात उपवास करके पञ्चगव्य पीने से शुद्ध होता है ॥ २२ ॥ जो उच्छिष्ट न हो ऐसा शूद्र ब्राह्मण का स्पर्श कर लेवे तो स्नान ही करे । यदि उच्छिष्ट शूद्र स्पर्श करले तो प्राजापत्य व्रत करे ॥ २३ ॥

भस्मनाशुद्ध्यतेकांस्यं सुरयायन्नलिप्यते ।
सुरामात्रेणसंस्पृष्टं शुद्ध्यतेऽग्न्युपलेखनैः ॥ २४ ॥
गवाघ्रातानिकांस्यानि श्वकाकोपहतानिच ।
शुद्ध्यन्तिदशभिःक्षारैः शूद्रोच्छिष्टानियानिच ॥२५॥
गण्डूषंपादशौचंच कृत्वावैकांस्यभाजने ।
षण्मासान्भुविनिक्षिप्य उद्धृत्यपुनराहरेत् ॥ २६ ॥
आयसेष्वपसारेण सीसस्याग्नौविशोधनम् ।
दन्तमस्थितथाशृङ्गं रौप्यंसौवर्णभाजनम् ॥ २७ ॥
मणिपाषाणशङ्खांश्च एतान्प्रक्षालयेज्जलैः ।
पाषाणेतुपुनर्घर्ष–एषाशुद्धिरुदाहृता ॥ २८ ॥
अद्भिस्तुप्रोक्षणंशौचं बहूनांधान्यवाससाम् ।
प्रक्षालनेनत्वल्पानामद्भिःशौचंविधीयते ॥ २९ ॥
मृद्भाण्डदहनाच्छुद्धिर्धान्यानांमार्जनादपि ।
वेणुवल्कलचीराणां क्षौमकार्पासवाससाम् ॥

जिसमें मदिरा का संसर्ग न हुआ हो ऐसा कांसेका पात्र भस्म से; और जिसमें मदिरा लगगई हो वह अग्निमें तपानेसे, और घिसने छीलनेसे, शुद्ध होता है ॥२४॥ गौके सूंघे, कुत्ता और कौआ के छूए, और शूद्र ने जिन में खाया हो ऐसे कांसेके पात्र दश खारी,वस्तु लगाने से शुद्ध होते हैं ॥ २५ ॥ कांसे के पात्र में कुल्ला करे वा पग धोवे तो उसे छः महीने तक पृथ्वी में गाड़रक्खे फिर निकाले तब भोजनादि के योग्य शुद्ध होता है ॥ २६ ॥ लोहे के पात्र स्थानान्तर में कर देने ही से शुद्ध हो जाते हैं। और सीसे के पात्रों की शुद्धि अग्नि में तपाने से होती है। दांत, हड्डी सींग, और चांदी सोने के पात्र ॥२७॥ मणि; पत्थर–और शंख इनको जलसे धोके शुद्ध करे परन्तु पत्थर के पात्र को फिर से घिसें तब शुद्ध होता है ॥ २८ ॥ बहुत से धान्य की राशि तथा बहुत से वस्त्र किसी कारण अशुद्ध हो जांय तो कुशों द्वारा जल छिड़कने से तथा थोड़े वस्त्र वा धान्य हों तो जल में धोने से शुद्ध होते हैं ॥ २९॥ मिट्टी के पात्र की अग्नि में फिर से पकाने पर, अन्नों की मार्जन (जल सेचन) से, बांस, वकल ,चीर

और्णामानेत्रपट्टानां प्रोक्षणाच्छुद्धिरिष्यते ॥ ३० ॥
मुञ्जोपस्करशूर्पाणां शाणस्य फलचर्मणाम् ।
तृणकाष्ठादिरज्जूनामुदकाभ्युक्षणंमतम् ॥ ३१ ॥
तूलिकाद्युपधानानि रक्तवस्त्रादिकानिच ।
शोषयित्वार्कतापेन प्रोक्षणाच्छुद्धिरिष्यते ॥३२॥
मार्जारमक्षिकाकीट पतङ्गकृमिदर्दुराः ।
मेध्यामेध्यंस्पृशन्तो ये नोच्छिष्टान्मनुरब्रवीत् ॥३३॥
महींस्पृष्ट्वागतंतोयं याश्चाप्यन्योन्यविप्रुषः ।
भुक्तोच्छिष्टंतथास्नेहं नोच्छिष्टंमनुरब्रवीत् ॥ ३४ ॥
ताम्बूलेक्षुफलान्येव भुक्तस्नेहानुलेपने ।
मधुपर्केचसोमेच नोच्छिष्टंधर्मतोविदुः ॥ ३५ ॥
रथ्याकर्दमतोयानि नावःपन्थास्तृणानिच ।
मरुतार्केणशुद्ध्यन्ति पक्वेष्टकचितानिच ॥ ३६ ॥

(भिल्ला कपड़ा) अतसी वस्त्र, और कपास के वस्त्र, ऊन और नेत्र (बेतआदि) के वस्त्र इन की पछोरने (फींचने) से शुद्धि मानी है ॥ ३० ॥ मूंजकी वस्तु सूप शण की वस्तु, फल, चाम; तृण, काठ, रस्सी इनकी जल छिड़कने से शुद्धि मानी है ॥३१॥ रुई आदि के तकिये तथा लाल वस्त्रादि को सूर्य के घाम में सुखा के जल छिड़कने से शुद्धि होना इष्ट है ॥३२॥ विलाव मक्खी, कीड़े, पतंगे, कृमि,मेंडक, ये सब पवित्र वा अपवित्र वस्तु का स्पर्श करें तो वस्तु उच्छिष्ट अशुद्ध नहीं होता यह मनु जी ने कहा है ॥ ३३ ॥ अशुद्ध वा नीच ने छुआ पृथ्वी में वहता हुआ जल और परस्पर बोलने से गिरने वाले थूक के छींटे तथा रसोईखाने में भोजन से बचा घी आदि स्नेह ये उच्छिष्ट नाम अशुद्ध नहीं होते यह भी मनु जी ने कहा है ॥ ३४ ॥ पान, गन्ने स्नेह युक्त फल, जिस में से खाया हो ऐसा घी आदि स्नेह मधुपर्क तथा सोमयागों का सोमरस तथा घिसा हुआ केशर चन्दनादि इन में से कुछ भाग प्रथम किसी ने खाया वा वर्त्ता हो तो शेष धर्मानुसार उच्छिष्ट वा अशुद्ध नहीं होता ॥ ३५ ॥ सड़क, कीचड़, जल, नौका, मार्ग, तृण (पलालचटाई आदि) पक्की ईंटों से चिने (मन्दिर भित्ति आदि) ये सब पवन और सूर्य के किरणों से शुद्ध होजाते हैं ॥३६॥ निरन्तर

अदुष्टाःसंततधारा वातोद्धूताश्चरेणवः ।
स्त्रियोवृद्धाश्चबालाश्च नदुष्यन्तिकदाचन ॥ ३७ ॥
क्षुतेनिष्ठीवनेचैव दन्तोच्छिष्टेतथाऽनृते ।
पतितानांचसंभाषे दक्षिणंश्रवणंस्पृशेत् ॥ ३८ ॥
अग्निरापश्चवेदाश्च सोमसूर्यानिलास्तथा ।
एतेसर्वेऽपिविप्राणां श्रोत्रेतिष्ठन्तिदक्षिणे ॥ ३९ ॥
प्रभासादीनितीर्थानि गङ्गाद्याःसरितस्तथा ।
विप्रस्यदक्षिणेकर्णे सान्निध्यंमनुरब्रवीत् ॥ ४० ॥
देशभङ्गेप्रवासेवा व्याधिषुव्यसनेष्वपि ।
रक्षेदेवस्वदेहादि पश्चाद्धर्मंसमाचरेत् ॥ ४१ ॥
येनकेनचधर्मेण मृदुनादारुणेनवा ।
उद्धरेद्दीनमात्मानं समर्थोधर्ममाचरेत् ॥ ४२ ॥
आपत्कालेतुसम्प्राप्ते शौचाऽऽचारंनचिन्तयेत् ।
शुद्धिंसमुद्धरेत्पश्चात् स्वस्थोधर्मंसमाचरेत् ॥ ४३ ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

के वेगसे उड़ी हुई धूलि, (रजस्वला होने से भिन्न) स्त्रियां, बालक, वृद्ध, ये स्नानादि किये विना भी कभी दूषित नहीं होते ॥३७॥ छींकने, थूकने दांतोंमें जूठन निकलने, झूठ बोलने, और पतितों के संग बोलने पर दहिने कान का स्पर्श करै ॥३८॥ अग्नि, जल, वेद, चन्द्रमा, सूर्य और वायु ये सब देवता ब्राह्मण के दहिने कान में निवास करते हैं ॥३९॥ प्रभासक्षेत्र आदि तीर्थ और गंगा आदि नदी, ये सब ब्राह्मण के कान में वास करते हैं यह मनु जी ने कहा है ॥ ४० ॥ देश में गदर होने, परदेश गमन करने, रोग, तथा व्यसन विपत्तियों के समय में अपवित्र विरुद्धाचरण करता हुआ भी अपने शरीरादि की रक्षा करै और पीछे स्वस्थ दशा होने पर धर्म का आचार विचार कर लेवे ॥४१॥ कोमल व कठोर जिस किसी धर्म से अपनी असमर्थ दीन दशा का उद्धार करै और समर्थ हो जाने पर फिर धर्म करै ॥ ४२ ॥ आपत्काल आ जाने पर शौच तथा आचार के बिगड़ने की चिन्ता न करै । पीछे स्वस्थ दशा प्राप्त होने पर शुद्धि और धर्म का आचरण कर लेवे ॥ ४३ ॥

यह पाराशरीय धर्मशास्त्र के भाषानुवादमें सातवां अध्याय पूरा हुआ ॥७॥

गवांबन्धनयोक्त्रेतु भवेन्मृत्युरकामतः।
अकामकृतपापस्य प्रायश्चित्तंकथंभवेत् ॥ १ ॥
वेदवेदाङ्गविदुषां धर्मशास्त्रंविजानताम् ।
स्वकर्मरतविप्राणां स्वकंपापंनिवेदयेत् ॥ २ ॥
अतऊर्ध्वंप्रवक्ष्यामि उपस्थानस्यलक्षणम् ।
उपस्थितोहिन्यायेन व्रतादेशनमर्हति ॥ ३ ॥
सद्योनिःसंशयेपापे नभुञ्जीतानुपस्थितः ।
भुञ्जानोवर्द्धयेत्पापं पर्षद्यत्रनविद्यते ॥ ४ ॥
संशयेतुनभोक्तव्यं यावत्कार्यविनिश्चयः ।
प्रमादस्तुनकर्त्तव्यो यथैवासंशयस्तथा ॥ ५ ॥
कृत्वापापंनगूहेत गूह्यमानंविवर्द्धते ।
स्वल्पंवाथप्रभूतंवा धर्मविद्भ्योनिवेदयेत् ॥ ६ ॥
तेहिपापकृतांवैद्या हन्तारश्चैवपाप्मनाम् ।
व्याधितस्ययथावैद्या बुद्धिमन्तोरुजापहाः ॥ ७ ॥

यदि अज्ञान से बांधने वा जोड़ने से गौओं की मृत्यु हो जाय तो अनिच्छा से किये पाप का प्रायश्चित्त कैसे हो ? सो कहते हैं ॥ १ ॥ वेद वेदाङ्ग और धर्मशास्त्र को जो जानते हों और जो अपने कर्म में तत्पर हों ऐसे ब्राह्मणों से अपना पाप निवेदन करे ॥ २ ॥ इस से आगे विद्वानों की सभा में उपस्थित (हाजिर) होने का स्वरूप कहते हैं क्योंकि जो न्याय से उपस्थित होता है वही व्रत के उपदेश योग्य है ॥ ३ ॥ यदि शीघ्र ही पाप का निश्चय हो जाय तो प्रायश्चित्त के लिये विद्वत्सभा में उपस्थित हुये विना भोजन न करे। जहां सभा न हो वहां भी पहिले जो भोजन करता है वह पाप को बढ़ाता है ॥ ४ ॥ यदि संशय होय कि मुझ से अपराध हुआ है वा नहीं ? तो कर्त्तव्य प्रायश्चित्त का निश्चय होने तक भोजन न करे और अपराध के निश्चय करनेमें प्रमाद (भूल) भी न करे किन्तु जिस प्रकार सन्देह मिट जाय वैसा ही करे ॥५॥ अपराध को करके कदापि न छिपावे, क्योंकि छिपाया हुआ पाप बढ़ता है—थोड़ा पाप हो वा बहुत हो उसे धर्म के ज्ञाताओं को निवेदन करके प्रायश्चित्त पूछे ॥ ६ ॥ क्योंकि वे ही लोग पाप करने वाले रोगियों के वैद्य हैं और पापों का नाश करने वाले हैं-जैसे

पञ्चपूर्वंमयाप्रोक्तास्तेषांचासंभवेत्रयः ।
स्ववृत्तिपरितुष्टाये परिषत्साऽपिकीर्तिता ॥ २२ ॥
अतऊर्द्ध्वंतुयेविप्राः केवलंनामधारकाः ।
परिषत्त्वंनतेष्वस्ति सहस्रगुणितेष्वपि ॥ २३ ॥
यथाकाष्ठमयोहस्ती यथाचर्ममयोमृगः ।
ब्राह्मणस्त्वनधीयान-स्त्रयस्तेनामधारकाः ॥ २४ ॥
ग्रामस्थानंयथाशून्यं यथाकूपस्तुनिर्जलः ।
यथाहुतमनग्नौच अमन्त्रोब्राह्मणस्तथा ॥ २५ ॥
यथाषण्ढोऽफलःस्त्रीषु यथागौरूषराऽफला ।
यथाचाज्ञेऽफलंदानं तथाविप्रोऽनृचोऽफलः ॥ २६ ॥
चित्रंकर्मयथानेकै-रङ्गैरुन्मील्यतेशनैः ।
ब्राह्मण्यमपितद्वद्धि संस्कारैर्मन्त्रपूर्वकैः ॥ २७ ॥
प्रायश्चित्तंप्रयच्छन्ति येद्विजानामधारकाः ।
तेद्विजाःपापकर्माणः समेतानरकंययुः ॥ २८ ॥

कोई एक भी हो तो उसे परिषत् (धर्मसभा) कह सकते हैं ॥ २१ ॥ हमने जो पहिले प्रायश्चित्त दात्री समिति के पांच सभ्य कहे हैं यदि वे पांचों न मिलें तो अपनी वृत्ति (जीविका) करने से सन्तोषी तीन भी पण्डित परिषत् (धर्मसभा) कहाते हैं ॥२२॥ इन से भिन्न जो ब्राह्मण केवल नाम के धारण करने वाले हैं वे चाहैं हजार गुणे भी हों तो उन की धर्मसभा नहीं होसकती ॥ २३ ॥ जैसे काठ का हाथी जैसे चामका हिरण वैसे ही वेद के विना पढ़े ब्राह्मण हैं ये तीनों नाम के ही धारण करने वाले हैं ॥ २४ ॥ जैसा निर्जन (जिस में कोई मनुष्य न हो वह) ग्राम, जैसा जल के बिना कूप (अंधौआ) जैसा अग्नि विना भस्मादि में होम करना है ऐसा ही वेद मन्त्रों को पढ़े विना ब्राह्मण भी शून्य मात्र है ॥ २५ ॥ जैसे स्त्रियों में नपुंसक वृथा है जैसे बंध्या गौ वृथा है और जैसे मूर्ख ब्राह्मण को दान देना वृथा है ऐसे ही वेद हीन ब्राह्मण वृथा है ॥ २६ ॥ जैसे चित्र खींचने वालों की चित्रकारी अनेक रंगों से शनैः २ अति शोभायमान चमकीली होती है इसी प्रकार मंत्रों के द्वारा हुए अनेक संस्कारों से ब्राह्मण पन भी उज्ज्वल प्रकाशमान होता है ॥ २७ ॥ जो विद्या और तप से हीन नामधारी ब्राह्मण प्रायश्चित्त देते हैं वे सब पापों के कर्त्ता इकट्ठे होकर नरक में जाते हैं ॥ २८ ॥

येपठन्तिद्विजावेदं पञ्चयज्ञरताश्चये ।
त्रैलोक्यंतारयन्त्येव पञ्चेन्द्रियरताअपि ॥ २९ ॥
संप्रणीतःश्मशानेषु दीप्तोऽग्निःसर्वभक्षकः ।
तथाचवेदविद्विप्रः सर्वभक्षोऽपिदैवतम् ॥ ३० ॥
अमेध्यानितुसर्वाणि प्रक्षिप्यन्तेयथोदके ।
तथैवकिल्बिपंसर्वं प्रक्षिपेच्चद्विजानले ॥ ३१ ॥
गायत्रीरहितोविप्रः शूद्रादप्यशुचिर्भवेत् ।
गायत्रीब्रह्मतत्त्वज्ञाः संपूज्यन्तेजनैर्द्विजाः ॥ ३२ ॥
दुःशीलोऽपिद्विजःपूज्यो नतुशूद्रोजितेन्द्रियः ।
कःपरित्यज्य गांदुष्टां दुहेच्छीलवतींखरीम् ॥ ३३ ॥
धर्मशास्त्ररथारूढा वेदखड्गधराद्विजाः ।
क्रीडार्थमपियद्ब्रूयुः सधर्मःपरमःस्मृतः ॥ ३४ ॥
चातुर्वैद्योविकल्पीच अङ्गविद्धर्मपाठकः ।
त्रयश्चाश्रमिणोमुख्याः पर्षदेषादशावरा ॥ ३५ ॥

जो ब्राह्मण वेद को पढ़ते हैं वा जो पंच महायज्ञों के करने में तत्पर हैं वे पांचों इन्द्रियों के विषयों में आसक्त हों तो भी त्रिलोकी को तारने वाले ही हैं ॥ २९ ॥ जैसे जलता हुआ अग्नि श्मशानों में मुर्दा का भक्षक होने पर भी संसार का उद्धार कर्त्ता देवता है इसी प्रकार सर्व भक्षक होने पर भी धर्म निष्ठ ब्राह्मण वेद का ज्ञाता होने से देवता ही है ॥ ३० ॥ जैसे संपूर्ण अपवित्र वस्तु वर्षादि के समय नद्यादि के जल में फेंके शुद्ध हो जाते हैं वैसे ही संपूर्ण पाप ब्राह्मण रूप अग्नि में छोड़ देने से भस्म हो जाते हैं अर्थात् वेद वेत्ता ब्राह्मण धर्मानुष्ठान रूप जप तपादि अग्नि से पापों को भस्म कर देते हैं ॥ ३१ ॥ गायत्री से हीन ब्राह्मण शूद्र से भी अधिक अशुद्ध होता है, (यह गायत्री न जानने वा न जपने का निन्दार्थवाद है) और गायत्री रूप वेद के तत्त्व को जानने वाले ब्राह्मणों को मनुष्य पूजते हैं ॥३२॥ दुष्ट स्वभाव वाला भी ब्राह्मण शूद्र की अपेक्षा अच्छा पूज्य है और जितेन्द्रिय भी शूद्र वैसा पूज्य नहीं क्योंकि (निकृष्ट ब्राह्मणमें भी कुछ ब्राह्मण पन अवश्य होगा) ऐसा कौन होगा ? जो दुष्ट गौ को छोड़ कर सुशीला गधी को दुहे ॥ ३३ ॥ धर्मशास्त्र रूपी रथ में बैठे, वेद रूपी खड्ग (हथियारों) को धारण किये विद्वान् ब्राह्मण साधारण विचार से भी जो कुछ कहें वह भी उत्तम धर्म माना जाय ॥ ३४ ॥ चारों वेदों के ज्ञाता चार विद्वान्, पाँचवा नैयायिक, छठा छः वेदाङ्गों का ज्ञाता, सातवां धर्मशास्त्रों का पाठक और ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ,

प्रायश्चित्ते समुत्पन्ने ह्रीमान्सत्यपरायणः ।
मृदुरार्जवसंपन्नः शुद्धिंगच्छतिमानवः ॥ ८ ॥
सचैलंवाग्यतःस्नात्वा क्लिन्नवासाः समाहितः ।
क्षत्रियोवाथवैश्योवा ततःपर्षदमाव्रजेत् ॥ ९ ॥
उपस्थायततःशीघ्रमार्तिमान्धरणींव्रजेत् ।
गात्रैश्चशिरसाचैव नचकिंचिदुदाहरेत् ॥ १० ॥
सावित्र्याश्चापिगायत्र्याः संध्योपास्त्यग्निकार्ययोः ।
अज्ञानात्कृषिकर्त्तारो ब्राह्मणानामधारकाः ॥ ११ ॥
अव्रतानाममन्त्राणां जातिमात्रोपजीविनाम् ।
सहस्रशःसमेतानां परिषत्त्वंनविद्यते ॥ १२ ॥
यंवदन्तितमोमूढा मूर्खाधर्ममतद्विदः ।
तत्पापंशतधाभूत्वा तद्वक्तृनधिगच्छति ॥ १३ ॥
अज्ञात्वाधर्मशास्त्राणि प्रायश्चित्तंददातियः ।
प्रायश्चित्तीभवेत्पूतः किल्विषंपर्षदिव्रजेत् ॥ १४ ॥

कि बुद्धिमान् वैद्य औषध द्वारा रोगी के रोग को दूर करने वाले होते हैं ॥७॥ प्रायश्चित्त के समय, लज्जा युक्त हो सत्य धर्म में तत्पर और बारंबार नम्रता कोमलता को धारण करने वाला क्षत्रिय वा वैश्य मनुष्य शुद्धि को प्राप्त हो जाता है ॥ ८ ॥ मौन धारण कर सचैल स्नान करके गीले वस्त्र पहिने हुये सावधान हो कर पर्षद्द (धर्म सभा) में जावे ॥ ६ ॥ फिर शीघ्र सभा के समीप जाकर दुःखी हुआ शरीर और शिर से (साष्टांग) पृथ्वी में पड़ जाय और कुछ न कहै ॥ १० ॥ सूर्यनारायण जिस के देवता हैं ऐसी गायत्री, सन्ध्यावंदन और अग्निहोत्र इन कामों को जो नहीं जानते और न करते हों किन्तु जो खेती करते हों वे नाम मात्र के ब्राह्मण हैं ॥ ११ ॥ जिन के सन्ध्यादि कर्म करने का नियम नहीं, जो वेद मन्त्रों को नहीं जानते और जातिमात्र से जो ब्राह्मण बने हैं ऐसे चाहे हजारों भी जिस में इकट्ठे हों वह परिषत् (धर्म सभा) नहीं है ॥१२॥ धर्म के मर्म को न जानने वाले अज्ञानी मूर्ख ब्राह्मण लोग जो (प्रायश्चित्तादि) बतलाते हैं वह पाप सौ गुणा होकर उन धर्म की व्यवस्था कहने वाले मूर्खों को प्राप्त होता है ॥१३॥ जो धर्मशास्त्रों को न जानकर प्रायश्चित्त देता है तो वह पापी पवित्र हो जाता है और उस प्रायश्चित्ती का प्रायश्चित्त देने वाले को लगता है ॥ १४ ॥ वेदों

चत्वारोवात्रयोवापि यंब्रूयुर्वेदपारगाः ।
सधर्मइतिविज्ञेयो नेतरैस्तुसहस्रशः ॥ १५ ॥
प्रमाणमार्गंमार्गन्तो येधर्मंप्रवदन्तिवै ।
तेषामुद्विजतेपापं सद्भूतगुणवादिनाम् ॥ १६ ॥
यथाश्मनिस्थितंतोयं मारुतार्केणशुद्ध्यति ।
एवंपरिषदादेशान्नाशयेत्तद्धिदुष्कृतम् ॥ १७ ॥
नैवगच्छतिकर्त्तारं नैवगच्छतिपर्षदम् ।
मारुतार्कादिसंयोगात्पापंनश्यतितोयवत् ॥ १८ ॥
चत्वारोवात्रयोवापि वेदवन्तोऽग्निहोत्रिणः ।
ब्राह्मणानांसमर्थाये परिषत्सांविधीयते ॥ १९ ॥
अनाहिताग्नयोयेऽन्ये वेदवेदाङ्गपारगाः ।
पञ्चत्रयोवाधर्मज्ञाः परिषत्साऽपिकीर्तिता ॥ २० ॥
मुनीनामात्मविद्यानां द्विजानांयज्ञयाजिनाम् ।
वेदव्रतेषुस्नातानामेकोऽपिपरिषद्भवेत् ॥ २१ ॥

को पूर्ण रूपसे ठीक २ जानने वाले चार वा तीन विद्वान् ब्राह्मण जिसको कहें वही धर्म जानो और अन्य हजार भी मिलकर जिसे कहें वह धर्म नहीं ॥१५॥ प्रमाण के मार्गको खोजते हुए जो पण्डित लोग धर्म की व्यवस्था कहते हैं उन सत्य कहने वालों से पाप डरता कांपता है॥१६॥ जैसे पत्थर पर पड़ा जल पवन और सूर्यके तेजसे शुद्ध हो जाता है। ऐसे ही धर्म सभा की आज्ञा से किये प्रायश्चित्त से उस पापी का पाप भी नष्ट हो जाता है ॥ १७ ॥ वह पाप न तो करने वाले पर रहता और न सभा पर जाता किन्तु पवन और सूर्य के संयोग से पत्थर पर पड़े जल के समान नष्ट होजाताहै ॥१८॥ वेद के ज्ञाता अग्निहोत्री चार वा तीन जो शास्त्र जानने वाले ब्राह्मणों में समर्थ हों उसे परिषत् कहते हैं ॥ १९ ॥ अथवा जो अग्निहोत्री नहीं किन्तु वेद वेदाङ्गों के तत्त्व को जानने वाले और धर्म के मर्म को जानने वाले हों ऐसे पांच वा तीन को भी परिषत् (धर्म सभा) कह सकते हैं ॥२०॥ कुछ न बोलने वाले मौनव्रती वा अल्पअल्पमितभाषी तपस्वी मुनि आत्मविद्या (वेदान्त) के ज्ञाता, द्विजों को यज्ञ कराने वाले, और वेदोक्त नियमों को ब्रह्मचर्य द्वारा समाप्त करके जिनने समावर्त्तन क्रिया हो ऐसे ब्राह्मणों में से

राज्ञश्चानुमतेस्थित्वा प्रायश्चित्तं विनिर्दिशेत् ।
स्वयमेवनकर्त्तव्यं कर्त्तव्यास्वल्पनिष्कृतिः ॥ ३६ ॥
ब्राह्मणांस्तानतिक्रम्य राजाकर्तुं यदीच्छति ।
तत्पापंशतधाभूत्वा राजानमनुगच्छति ॥ ३७ ॥
प्रायश्चित्तं सदादद्याद्देवतायतनाग्रतः ।
आत्मकृच्छ्रं ततःकृत्वा जपेद्वैवेदमातरम् ॥ ३८ ॥
सशिखंवपनंकृत्वा त्रिसंध्यमवगाहनम् ।
गवांमध्येवसेद्रात्रौ दिवागाश्चाप्यनुव्रजेत् ॥ ३९ ॥
उष्णेवर्षतिशीतेवा मारुतेवातिवाभृशम् ।
नकुर्वीतात्मनस्त्राणं गोरकृत्वातुशक्तितः ॥ ४० ॥
आत्मनोयदिवाऽन्येषां गृहेक्षेत्रेऽथवाखले ।
भक्षयन्तींनकथयेत्पिवन्तंचैववत्सकम् ॥ ४१ ॥

ये तीनों आश्रमों वाले मुखिया, यह कम से कम दश धर्मज्ञ विद्वानों की धर्म सभा कहाती है ॥ ३५ ॥ राजा की अनुमति में होकर प्रायश्चित्त बतावें आप ही प्रायश्चित्त का निर्णय न कर देवें (अर्थात् प्रायश्चित्तादि धर्म व्यवस्था कारिणी विद्वत्सभा राज सभा की अनुमति से अपना काम करे). परन्तु स्वल्प प्रायश्चित्त को स्वयं भी निश्चित कर देवे ॥ ३६ ॥ यदि उन विद्वान् ब्राह्मणोंका उल्लंघन करके राजा स्वयं किया चाहे तो वह पाप सौ गुणा होकर राजा को लगता है ॥ ३७ ॥ सदैव देवता के मन्दिर के आगे प्रायश्चित्त करावे। फिर वह प्रायश्चित्त कराने वाला विद्वान् भी स्वयं कृच्छ्र व्रत (प्रायश्चित्त) करके वेद की माता गायत्री का जप करे ॥ ३८ ॥ प्रायश्चित्त करने वाला शिखा सहित वालों का मुंडन कराके सायं प्रातः और मध्यान्ह में त्रिकाल स्नान किया करै। रात्रि को गौओं के बीच गोशाला में बसे और दिन में चरने को निकली गौओं के पीछे २ जंगल में भ्रमण किया करै ॥ ३९ ॥ अत्यंत उष्णकाल (गर्मी) में वर्षा में, शीतकाल में, और अत्यन्त पवन (आंधी) में अपनी रक्षा का उपाय तब करै जब शक्ति भर गौओं की रक्षा पहिले कर लेवे ॥ ४० ॥ अपने अथवा अन्य के घर में, खेत में अथवा खलियान में खाती हुई गौ को न स्वयं हटावे तथा न अन्य से हटाने को कहे और दूध पीते हुए बछड़े को भी किसी को न बतावे ॥ ४१ ॥ गौओं के जल

पिबन्तीषुपिबेत्तोयं संविशन्तीषुसंविशेत् ।
पतितांपङ्कलग्नांवा सर्वप्राणैःसमुद्धरेत् ॥ ४२ ॥
ब्राह्मणार्थेगवार्थेवा यस्तुप्राणान्परित्यजेत् ।
मुच्यतेब्रह्महत्याया गोप्तागोर्ब्राह्मणस्यच ॥ ४३ ॥
गोवधस्यानुरूपेण प्राजापत्यंविनिर्दिशेत् ।
प्राजापत्यंतुयत्कृच्छ्रं विभजेत्तच्चतुर्विधम् ॥ ४४ ॥
एकाहमेकभक्ताशी एकाहंनक्तभोजनः ।
अयाचितश्चैकमहरेकाहंमारुताशनः ॥ ४५ ॥
दिनद्वयंचैकभक्तो द्विदिनंनक्तभोजनः ।
दिनद्वयमयाचीस्याद्द्विदिनंमारुताशनः ॥ ४६ ॥
त्रिदिनंचैकभक्ताशी त्रिदिनंनक्तभोजनः ।
दिनत्रयमयाचीस्यात्त्रिदिनंमारुताशनः ॥ ४७ ॥
चतुरहंत्वेकभक्ताशी चतुरहंनक्तभोजनः ।
चतुर्दिनमयाचीस्याच्चतुरहंमारुताशनः ॥ ४८ ॥

पीने पर स्वयं जल पीवे, गौओं के बैठने पर स्वयं बैठे और गढ़े आदि में गिरी पड़ी वा कीचड़ में फँसी गौ को संपूर्ण बल से उठावे निकाले ॥ ४२ ॥ जो कोई मनुष्य ब्राह्मण वा गौओं की रक्षा करने के लिये अपने प्राणों को भी देकर गौ और ब्राह्मण की रक्षा करै वह ब्रह्महत्यादि महा पापों से शीघ्र ही छूट जाता है ॥ ४३ ॥ गोवध पाप के अनुसार निम्न चतुर्विधों में से उचित प्राजापत्य व्रत बतावे। उस कृच्छ्र व्रत को चार भाग में बांटे ॥ ४४ ॥ एक दिन प्रातःकाल, एकवार परिमित अन्न खावे, और एक दिन रात में भोजन करै, एक दिन विना मांगे जो मिलै उसे खावे और एक दिन सर्वथा निराहार रहे यह छोटा कृच्छ्र वा पादकृच्छ्र व्रत है ॥ ४५ ॥ दो दिन एकबार प्रातःकाल परिमित खावे; दो दिन रात में परिमित भोजन करै, दो दिन बिना मांगे जो मिले उसे खावे, फिर दो दिन निराहार उपवास करे यह द्वितीय कक्षा का कृच्छ्र व्रत वा अर्द्ध कृच्छ्र जानो ॥ ४६ ॥ तीन दिन एकवार प्रातः, खावे, तीन दिन रातमें भोजन करै, तीन दिन विना मांगे जो मिले उसे खावे फिर तीन दिन निराहार रहे यह तीसरा वा पौन कृच्छ्र व्रत है ॥४७॥ चार दिन एकवार प्रातः खावे, चार दिन रात में एक बार भोजन करै फिर चार दिन बिना मांगे जो मिले उसे खावे और चार दिन निराहार रहे यह पूरा कृच्छ्र व्रत है (इन व्रतोंमें ३६-से ४२ तक श्लोकोंमें कहे

प्रायश्चित्ते ततश्चीर्णे कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ।
विप्राणां दक्षिणां दद्यात्पवित्राणि जपेद्द्विजः ॥ ४९ ॥
ब्राह्मणान्भोजयित्वा तु गोघ्नः शुद्ध्येन्न संशयः ॥ ५० ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

गवां संरक्षणार्थाय न दुष्येद्रोधबन्धयोः ।
तद्वधं तु न तं विद्यात्कामाकामकृतं तथा ॥ १ ॥
दण्डादूर्ध्वं यदान्येन प्रहरेद्वा निपातयेत् ।
प्रायश्चित्तं तदा प्रोक्तं द्विगुणं गोवधे चरेत् ॥ २ ॥
रोधबन्धनयोक्त्राणि घातश्चेति चतुर्विधम् ।
एकपादं चरेद्रोधे द्विपादं बन्धने चरेत् ॥ ३ ॥
योक्त्रेषु तु त्रिपादं स्याच्चरेत्सर्वं निपातने ।
गोचरे वा गृहे वापि दुर्गेष्वप्यसमस्थले ॥ ४ ॥

अनुसार वर्त्ताव करे) ॥ ४८ ॥ प्रायश्चित्त के पूर्ण हुए पीछे वह द्विज ब्राह्मणादि अन्य सुपात्र ब्राह्मणोंको भोजन करावे दक्षिणा देवे और पवित्र वेद मन्त्रों (गायत्री आदि) को जपे ॥ ४९ ॥ ब्राह्मणों को भोजन करा कर गोवध का करने वाला शुद्ध हो जाता है इस में सन्देह नहीं है ॥ ५० ॥

यह पाराशरीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में आठवां अध्याय पूरा हुआ ॥

गौओं की रक्षा के लिये रोकने और बांधने में यदि गौ मरजाय तो उसको गोवध नहीं जानना, चाहे वह रक्षा के उद्देश्य को लेकर रोकने बांधने की इच्छा से भी हुआ हो ॥ १ ॥ दंड से भिन्न यदि किसी औजार से गौ को मारै वा गिरा देवे तो वह गोवध में कहे से दूना प्रायश्चित्त करै ॥ २ ॥ रोकने, बंध बांधने, जोतने, और मारने से इन चार प्रकारों से गोहत्या होती है । परन्तु ये काम कष्ट पहुंचाने की इच्छा से निर्दय होकर किये गये हों तब, यदि रोकने से गोहत्या हुई हो तो एक पाद, बंधन से हुई हो तो दो पाद ॥ ३ ॥ योक्त्र से गोहत्या होने पर तीनपाद, और मारने से हुई गोहत्या में (अ० ८ के श्लोक ४४ से ५० तक में कहा) संपूर्णप्रायश्चित्त करै । गौओं के चरने को रखाये बाड़ा में, घर में, दुर्ग (जहां निकलने पैठने का रास्ता न हो) में और ऊंची नीची जगह में, ॥ ४ ॥ नदियों में, समुद्र में, गड्ढों में, गुफा के मुख में,

नदीष्वथसमुद्रेषु खातेष्वथदरीमुखे ।
दग्धदेशेमृतागावः स्तम्भनाद्रोधउच्यते ॥ ५ ॥
योक्त्रदामकडारैश्च कण्ठाभरणभूषणैः ।
गृहेचापिवनेवापि बद्धास्याद्गौमृतायदि ॥ ६ ॥
तदेवबन्धनंविद्यात्कामाकामकृतंचयत् ।
हलेवाशकटेपङ्क्तौ भारेवापीडितोनरैः ॥ ७ ॥
गोपतिमृत्युमाप्नोति यौक्त्रोभवतितद्वधः ।
मत्तःप्रमत्तउन्मत्तश्चेतनोवाऽप्यचेतनः ॥ ८ ॥
कामाकामकृतक्रोधो दण्डैर्हन्यादथोपलैः ।
प्रहतावामृतावापि तद्धिहेतुर्निपातने ॥ ९ ॥
अङ्गुष्ठमात्रस्थूलस्तु बाहुमात्रःप्रमाणतः ।
आर्द्रस्तुसपलाशश्च दण्डइत्यभिधीयते ॥ १० ॥
मूर्छितःपतितोवापि दण्डेनाभिहतःसतु ।
उत्थितस्तुयदागच्छेत्पञ्चसप्तदशाथवा ॥ ११ ॥

जले तपे हुए स्थान में, इन जगहों में खड़ी हुई गौओं को रोकने से रोध द्वारा मरना कहते हैं ॥ ५ ॥ यदि जुए में वा रस्सी से बांधा हो, घंटारों की रस्सी से वा आभूषण की रस्सी से घर में वा वन में बंधी हुई गौ यदि मरजाय तो ॥ ६ ॥ अवस्था भेद से उस को कामकृत वा अकामकृत हत्या कहते हैं। यदि हल में, वा गाड़ी में, वा दो चार बैलों की पांति में बांधने पर, बोझा लादने पर, मनुष्यों से पीड़ा को प्राप्त हुआ ॥ ७ ॥ बैल मरजाय तो उस वध को यौक्त्र कहा है। जो मनुष्य मत्त, प्रमत्त, उन्मत्त, चेतन वा अचेतन दशा में हो ॥ ८ ॥ समझ कर वा बिना समझे क्रोध करके डंडों से वा पत्थरों से गौ पर प्रहार करै और वह गौ मरजाय तो उसे निपातन (मरण) का हेतु कहते हैं ॥ ९ ॥ अंगूठे भर मोटा और भुजा की बराबर लंबा, गीला और पत्तों वाला जो हो उसे दंड कहते हैं ॥ १० ॥ मूर्छा को प्राप्त हुआ, वा पड़ा हुआ वा दंड से ताड़ा हुआ वह बैल जो पांच वा सात, अथवा दश पग तक उठ कर चले ॥ ११ ॥ अथवा एक ग्रास खालेवे वा जल पीलेवे और पहिले से उस को कोई

ग्रासंवायदिगृह्णीयात्तोयंवापिपिबेद्यदि ।
पूर्वंव्याध्युपसृष्टश्चेत्प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ १२ ॥
पिण्डस्थेपादमेकंतु द्वौपादौगर्भसंमिते ।
पादोनंव्रतमुद्दिष्टं हत्वागर्भमचेतनम् ॥ १३ ॥
पादेऽङ्गरोमवपनं द्विपादेश्मश्रुणोऽपिच ।
त्रिपादेतुशिखावर्जं सशिखंतुनिपातने ॥ १४ ॥
पादेवस्त्रयुगंचैव द्विपादेकांस्यभाजनम् ।
त्रिपादेगोवृषंदद्याच्चतुर्थेगोद्वयंस्मृतम् ॥ १५ ॥
निष्पन्नसर्वगात्रेषु दृश्यतेवासचेतनः ।
अङ्गप्रत्यङ्गसंपूर्णो द्विगुणंगोव्रतंचरेत् ॥ १६ ॥
पाषाणेनैवदण्डेन गावोयेनाभिघातिताः ।
शृङ्गभङ्गेचरेत्पादं द्वौपादौनेत्रघातने ॥ १७ ॥
लाङ्गूलेपादकृच्छ्रंतु द्वौपादावस्थिभञ्जने ।
त्रिपादंचैवकर्णेतु चरेत्सर्वंनिपातने ॥ १८ ॥

रोग भी हो तो ऐसी हिंसा का प्रायश्चित्त नहीं है ॥ १२ ॥ यदि गोलाका पिंडी मात्र बने गर्भ को गिरावे तो पाद कृच्छ्र व्रत, कुछ २ गर्भ का आकार बनजाने पर गर्भपात कराने में आधा कृच्छ्र व्रत, और ठीक २ बने अचेतन गर्भ को गिरावे तो पौन कृच्छ्र व्रत प्रायश्चित करे (यहां मारने पीटने से गिरे पशु गर्भ का प्रायश्चित्त जानो) ॥१३॥ पादकृच्छ्र प्रायश्चित्त में शरीर के रोम मुंडावे, आधे कृच्छ्र व्रत में डाढ़ी मूंछें भी मुंडावे त्रिपाद (पौन) व्रत में शिखा को छोड़कर मुंडावे और पूरे कृच्छ्र व्रत में शिखा सहित बालों को मुंडावे ॥ १४ ॥ चौथाई व्रत में दो वस्त्र, आधे व्रत में कांसे का पात्र, त्रिपाद (पौन) व्रत में एक बैल, और चौथे पूर्ण प्रायश्चित्त में दो गौ दक्षिणा देवे ॥ १५ ॥ यदि सब अंग जिस के बन गये हों ऐसा अंग प्रत्यंगों सहित पूरा २ चेतन गर्भ दीखता हो तो उस के गिराने में पूर्व कहे गोवध के प्रायश्चित्त से दूना प्रायश्चित्त करै ॥१६॥ पत्थर वा दंड से जिसने गौ को ताड़ना की हो उस से यदि सींग टूट जाय तो पाद व्रत और नेत्र फूटजाय तो आधा कृच्छ्र व्रत प्रायश्चित्त करै ॥ १७ ॥ पूंछ टूट जावे तो चौथाई व्रत, हाड़ टूट जाय तो आधा व्रत, कान टूट जाय तो तीन पाद (पौन) व्रत और उस पशु के मरजाने पर संपूर्ण प्रायश्चित्त करै ॥ १८ ॥ सींग टूटने पर, वा गोड़

शृङ्गभङ्गेऽस्थिभङ्गेच कटिभङ्गेतथैवच ।
यदिजीवतिषण्मासान्प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ १९ ॥
व्रणभङ्गेचकर्तव्यः स्नेहाभ्यङ्गस्तुपाणिना ।
यवसश्चोपहर्तव्यो यावद्दृढवलोभवेत् ॥ २० ॥
यावत्संपूर्णसर्वाङ्गस्तावत्तंपोषयेन्नरः ।
गोरूपंब्राह्मणस्याग्रे नमस्कृत्वाविसर्जयेत् ॥ २१ ॥
यद्यसंपूर्णसर्वाङ्गो हीनदेहोभवेत्तदा ।
गोघातकस्यतस्यार्द्धं प्रायश्चित्तंविनिर्दिशेत् ॥ २२ ॥
काष्ठलोष्टकपाषाणैः शस्त्रेणैवोद्धतोवलात् ।
व्यापादयतियोगांतु तस्यशुद्धिंविनिर्दिशेत् ॥ २३ ॥
चरेत्सांतपनंकाष्ठे प्राजापत्यंतुलोष्टके ।
तप्तकृच्छ्रंतुपाषाणे शस्त्रेचैवातिकृच्छ्रकम् ॥ २४ ॥
पञ्चसान्तपनेगावः प्राजापत्येतथात्रयः ।
तप्तकृच्छ्रे भवन्त्यष्टावतिकृच्छ्रे त्रयोदश ॥ २५ ॥

आदि का हाड़ टूटने पर, छः महीने तक जीवित रहे तो प्रायश्चित्त नहीं है अर्थात् १७ १८ श्लोकों में कहे प्रायश्चित्त सींगादि टूटने पर छः महिने से पहिले पशु के मरने पर जानो ॥ १९ ॥ यदि बैलादि के घाव हो जाय तो हाथ से उस घाव पर तैलादि दवा लगाया करे और जब तक बैल बलवान् न हो तब तक घास खिलाया करे काम कुछ न लेवे ॥२०॥ जब तक ठीक घाव पूरा होके हृष्ट पुष्ट न हो जाय तब तक मनुष्य उस का पोषण करे। फिर गौ रूप बैल को ब्राह्मण के आगे नमस्कार करके छोड़ देवे ॥ २१ ॥ यदि उस बैल का कोई अंग ठीक अच्छा न हो किन्तु लूला लंगड़ा ही रहे और हीनदेह (दुबला) हो जाय तो गौ के मारने वाले को कहे से आधा प्रायश्चित्त बतावे ॥ २२ ॥ यदि लकड़ी, ढेला, पत्थर, वा किसी हथियार से बल पूर्वक मारा हुआ बैल मरजावे तो उस का निम्न लिखित प्रायश्चित्त जानो ॥ २३ ॥ लकड़ी से मरने पर कृच्छ्र सान्तपन, ढेला से मरने पर प्राजापत्य, पत्थर से मरने पर तप्तकृच्छ्र, और हथियार (बर्छी भालादि) से मरने पर अतिकृच्छ्र व्रत करे ॥ २४ ॥ सान्तपन में पांच, प्राजापत्य में तीन, तप्त कृच्छ्र में आठ और अतिकृच्छ्र व्रत करने में तेरह गौ दक्षिणा देवे

प्रमापणेप्राणभृतां दद्यात्तत्प्रतिरूपकम् ।
तस्यानुरूपंमूल्यंवा दद्यादित्यब्रवीन्मनुः ॥ २६ ॥
अन्यत्राङ्कनलक्ष्मभ्यां वहनेमोचनेतथा ।
सायंसंगोपनार्थंच नदुष्येद्रोधबन्धयोः ॥ २७ ॥
अतिदाहेऽतिवाहेच नासिकाभेदनेतथा ।
नदीपर्वतसंचारे प्रायश्चित्तं विनिर्दिशेत् ॥ २८ ॥
अतिदाहेचरेत्पादं द्वौपादौवाहनेचरेत् ।
नासिक्येपादहीनंतु चरेत्सर्वंनिपातने ॥ २९ ॥
दहनात्तु विपद्येत अनड्वान्योक्त्रयन्त्रितः ।
उक्तंपराशरेणैव ह्येकंपादंयथाविधि ॥ ३० ॥
रोधनंबन्धनंचैव भारःप्रहरणंतथा ।
दुर्गप्रेरणयोक्त्रंच निमित्तानिवधस्यषट् ॥ ३१ ॥

॥ २५ ॥ प्राणियों के मारने पर उन २ की प्रतिमा सुवर्ण की बनवा के दान करे अथवा उस २ प्राणी का जितना जितना उचित मूल्य हो उतना दान करे यह बात मनु जीने कही है ॥२६॥ स्वामी के नामसे (अङ्कित करने) वा चिह्न लगाने, जोतने तथा छोड़नेमें और सायंकाल रात्रि में रक्षा करने के लिये रोकने बांधने में गौओं को जो कुछ कष्ट हो वा कोई गौ दैवयोग से मर भी जाय तो दोष नहीं लगेगा ॥ २७ ॥ दाग देने में अत्यन्त जलाने, वा बहुत काल तक सख्ती से हलादि में जोतने पर, नाथने में और नदी में घुसाने तथा पर्वत पर चढ़ाने पर यदि बैल मर जाय तो निम्न लिखित प्रायश्चित्त जानो ॥ २८ ॥ दागने से मरने पर चौथाई, जोतने से मरने पर आधा, नाथने से मरने पर पौना और नदी पर्वत पर घुसाने चढ़ाने से मरने पर पूरा सान्तपन कृच्छ्र प्रायश्चित्त करे ॥ २९ ॥ यदि रस्सी से बांधे हुए बैल को गिरा कर दाग देने मात्र से मर जावे तो महर्षि पराशर की सम्मत्यनुसार चौथाई प्रायश्चित्त करे ॥३०॥ रोकना बांधना, बोझा लादना, लकड़ी आदिसे मारना पीटना, किसी कठिन जगह नदी आदि में घुसाना वा चढ़ाना, और नाथ डालने आदि के लिये गिराने को रस्सी आदि से बांधना इन छः निमित्तों से बैल आदि पशु की हिंसा होती है ॥ ३१ ॥ खूंटा पर

बन्धपाशसुगुप्ताङ्गो म्रियतेयदिगोपशुः ।
भवनेतस्यनाशस्य पापेकृच्छ्रार्द्धमर्हति ॥ ३२ ॥
न नारिकेलैर्नच शाणवालैर्नचापिमौञ्जैर्नचवल्कशृङ्खलैः ।
एतैस्तुगावोननिबन्धनीया बद्ध्वातुतिष्ठेत्परशुंगृहीत्वा॥३३॥
कुशैःकाशैश्चबध्नीयाद्गोपशुंदक्षिणामुखम् ।
पाशलग्नाग्निदग्धेषु प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ३४ ॥
यदितत्रभवेत्काण्डं प्रायश्चित्तंकथंभवेत् ।
जपित्वापावनींदेवीं मुच्यतेतत्रकिल्बिषात् ॥ ३५ ॥
प्रेरयन्कूपवापीषु वृक्षच्छेदेषुपातयन् ।
गवाशनेषुविक्रीणंस्ततःप्राप्नोतिगोवधम् ॥ ३६ ॥
आराधितस्तुयःकश्चिद् भिन्नकक्षोयदाभवेत् ।
श्रवणंहृदयंभिन्नं मग्नोवाकूपसंकटे ॥ ३७ ॥

बांधा हुआ रस्सी की फांसी लग कर यदि बैल मर जावे। तब घर में उस बैल के नाश का पाप लगने पर आधा कृच्छ्र व्रत प्रायश्चित्त करे ॥ ३२ ॥ नारियल की, शण की, वालों की, मूंज की, तथा वक्कल की रस्सी से और लोहे की सांकल से इन सब से गौ बैल को नहीं बांधना चाहिये। यदि कदाचित् इन से बांधे तो हाथ में फरसा लिये गौ के समीप रक्षार्थ खड़ा रहे ॥ ३३ ॥ किन्तु कुशों तथा कांसों की रस्सी से दक्षिण को मुख करके गौ को बांधे। कुशादि की रस्सीसे रक्षार्थ बांधने पर फांसी लगजाय वा अग्नि लग कर गौ बैल जल जाय तो प्रायश्चित्त नहीं करने पड़ेगा क्योंकि बांधने वाले का दोष नहीं है ॥ ३४ ॥ यदि वहां सरपता का ढेर लगा हो और उसमें अग्नि लगकर गौ जल जावे तो प्रायश्चित्त कैसे हो? इस का उत्तर यह है कि वहां जगत्पावनी गायत्री का जप करके उस पाप से छूट जाता है ॥३५॥ कुआं वा वाउली में घुसाने की प्रेरणा करता हुआ, कटे हुए पड़े वृक्षों पर घेर २ कर गिराते हुए गौ मर जावे वा गोभक्षक कसाई आदिके हाथ वेंचने पर गोहत्या लगतीहै। कसाई कहने से मुसल्मानों का ही ग्रहण नहीं किन्तु भारतमें भी गोहिंसक वा भक्षक नीचजातियां पहिले से विद्यमान थीं] ॥ ३६ ॥ यदि उक्त हालत में गौके वचाने का उपाय करने पर भी उस की कोख फटजाय, कान टूट जाय, हृदय फटजाय, वा कुए में डूब कर मरजाय ॥ ३७ ॥ अथवा कुए पर इधर से उधर फंदाने से भी उस बैल की ग्रीवा वा

कूपादुत्क्रमणेचैव भग्नोवाग्रीवपादयोः ।
सएवम्रियतेतत्रत्रीन्पादांस्तुसमाचरेत् ॥ ३८ ॥
कूपखातेतटीबन्धे नदीबन्धेप्रपासुच ।
पानीयेषुविपन्नानां प्रायश्चित्तं नविद्यते ॥ ३९ ॥
कूपखातेतटीखाते दीर्घखातेतथैवच ।
अन्येषुधर्मखातेषु प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ४० ॥
वेश्मद्वारेनिवासेषु योनरःखातमिच्छति ॥
स्वकार्यगृहखातेषु प्रायश्चित्तंविनिर्दिशेत् ॥ ४१ ॥
निशिबन्धनिरुद्धेषु सर्पव्याघ्रहतेषुच ।
अग्निविद्युद्विपन्नानां प्रायश्चित्तं नविद्यते ॥ ४२ ॥
ग्रामघातेशरौघेण वेश्मबन्धनिपातने ।
अतिवृष्टिहतानांच प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ४३ ॥
संग्रामेऽपहतानांच येदग्धावेश्मकेषुच ।
दावाग्निग्रामघातेषु प्रायश्चित्तं नविद्यते ॥ ४४ ॥

टांग टूट जावे और इसी कारण यदि वह मर जाय तो त्रिपाद (तीन हिस्सा) कृच्छ्र सान्तपन व्रत प्रायश्चित्त करे ॥ ३८ ॥ कुए, गढ़े, वा पोखरेमें; बांधपर; नदीमें; प्याऊमें पानी पिलाते समय यदि गौ वा बैल मरजावे तो प्रायश्चित्त नहीं लगेगा ॥३९॥ कुए के समीप खोदे हुए गढ़े में, नदी के गढ़े में वा बहुत काल से खोदे हुए गढ़े में, अथवा धर्मार्थ खोदे हुए तालाब आदि में जल पिलाने को घुसाये गौ वा बैल के मर जाने पर भी प्रायश्चित्त नहीं लगता है ॥ ४० ॥ घरके द्वार पर, गोशाला में, वा अपने किसी प्रयोजन से घर के भीतर कोई गढ़ा खोदा हो और उन में गिर कर यदि गौ वा बैल मर जावे तो यथोचित प्रायश्चित्त करै ॥ ४१ ॥ रक्षा के लिये रात्रि में बांधने वा रोकने पर यदि सांप काट ले, अथवा बाघ आदि जानवर मार डाले, अकस्मात् आग लग जाय अथवा बिजली गिरकर मरजाय तो प्रायश्चित्त नहीं लगेगा ॥ ४२ ॥ गांव में लूट हो, डांका पड़े और अनेक बाण चलने से गोहत्या हो, वा घर की भीत गिर जाने से मरे अथवा अत्यन्त वर्षा होने से गौ वा बैल मरें उनका भी प्रायश्चित्त नहीं लगेगा ॥ ४३ ॥ युद्ध के समय पर, घर में आग लगजाने पर, बन के अग्नि से, अथवा गांव के नष्ट होने पर जो गौ मरजावें उनका प्रायश्चित्त किसी को नहीं लगेगा ॥४४॥

यन्त्रिताग़ौश्चिकित्सार्थं मूढगर्भविमोचने ।
यत्नेकृतेविपद्येत प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ४५ ॥
व्यापन्नानांबहूनांच रोधनेबन्धनेपिवा ।
भिषङ्मिथ्याप्रचारेण प्रायश्चित्तंविनिर्दिशेत् ॥ ४६ ॥
गोवृषाणांविपत्तौच यावन्तःप्रेक्षकाजनाः ।
अनिवारयतांतेषां सर्वेषांपातकंभवेत् ॥ ४७ ॥
एकोहतोयैर्बहुभिःसमेतैर्नज्ञायतेयस्यहतोभिघातात् ।
दिव्येनतेषामुपलभ्यहन्ता,निवर्त्तनीयोनृपसन्नियुक्तैः४८
एकाचेद्बहुभिःकाचिद्दैवाद्व्यापादिताक्वचित् ।
पादंपादंतुहत्यायाश्चरेयुस्तेपृथक्पृथक् ॥ ४९ ॥
हतेतुरुधिरंदृश्यं व्याधिग्रस्तःकृशोभवेत् ।
ग्रासार्थंचोदितोवापि अध्वानंनैवगच्छति ।

यदि औषध करने के लिये गौ को रस्सी से बांधकर गिराने से, और अटके हुए गर्भ को निकालने से उपाय करने पर भी गौ मरजाय तो गोहत्या का दोष नहीं लगेगा ॥ ४५ ॥ यदि बहुत गौ आदि पशुओं को एक साथ थोड़ी जगह में रोकने वा बांधने पर अनेक गौ मर जावें । अथवा वैद्य डाक्टरादि की विरुद्ध हानिकारक दी ओषधि से गौ मरजावे तो प्रायश्चित्त यथोचित करना चाहिये ॥ ४६ ॥ जहां गौ वा बैल मारे पीटे वा वध किये जाते हों तब जितने देखने वाले ब्राह्मणादि सनातनधर्मी देखते रहें वा सुनते जानते रहें और गोहत्या का निवारण न करें तो गोहत्या का पाप सब को लगता है ॥ ४७ ॥ एक मनुष्य वा पशु को इकट्ठे हुए बहुतों ने मारा हो पर यह न जान पड़े कि किस की चोट से मारा गया तो वहां अग्नि का गोला हाथ पर रखने आदि दिव्य उपाय से अपराधी को जानकर राजकर्मचारी अन्यों को अपराध से निवृत्त करें ॥ ४८ ॥ यदि एक गौ को बहुत मनुष्यों ने मिलकर मारा हो तो हत्या का चौथाई २ प्रायश्चित्त सब करें ॥४९॥ कोई बैल मारा पीटा गया हो तो रुधिर निकलने से, वा रोग से दुर्बल हो जावे, वा दाना घास आदि खिलाने पर भी न खावे वा मार्ग में हांकने पर भी न चले और फेन गिरावे तो जान लो कि बैलको किसीने मारा पीटा

लालाभवतिक्रुष्टेषु एवमन्वेषणंभवेत् ॥ ५० ॥
मनुनाचैवमेकेन सर्वशास्त्राणिजानता ।
प्रायश्चित्तंतुतेनोक्तं गोघ्नश्चान्द्रायणंचरेत् ॥ ५१ ॥
केशानांरक्षणार्थाय द्विगुणंव्रतमाचरेत् ।
द्विगुणेव्रतआदिष्टे दक्षिणाद्विगुणाभवेत् ॥ ५२ ॥
राजावाराजपुत्रोवा ब्राह्मणोवाबहुश्रुतः ।
अकृत्वावपनंतेषां प्रायश्चित्तंविनिर्दिशेत् ॥ ५३ ॥
यस्यनद्विगुणन्दानङ्केशश्चपरिरक्षितः ।
तत्पापंतस्यतिष्ठेत वक्ताचनरकंव्रजेत् ॥ ५४ ॥
यत्किंचित्क्रियतेपापं सर्वंकेशेषुतिष्ठति ।
सर्वान्केशान्समुद्धृत्य छेदयेदङ्गुलद्वयम् ॥ ५५ ॥
एवंनारीकुमारीणां शिरसोमुण्डनंस्मृतम् ।
नस्त्रियाःकेशवपनं नदूरेशयनासनम् ॥ ५६ ॥

है ॥ ५० ॥ धर्म शास्त्रों का मर्म जानने वाले एक मनुजी ने गोहत्या करने वाले को चान्द्रायण व्रत प्रायश्चित्त कहा है ॥ ५१ ॥ यदि कोई मनुष्य प्रायश्चित्त में शिर के बाल न मुंडाना चाहे तो उसे दूना प्रायश्चित्त व्रत करना चाहिये । और उस में दक्षिणा भी द्विगुणी देनी चाहिये ॥ ५२ ॥ ऐसे द्विगुण प्रायश्चित्त करने वालों को राजा, वा राजपुत्र अथवा बहुत शास्त्रों को जानने वाला ब्राह्मण विद्वान् प्रायश्चित्त करावे ॥५३॥ जो अपराधी शिर के बाल न मुंडावे और दक्षिणा भी दूनी न देवे उस का पाप प्रायश्चित्त से निवृत्त नहीं होता किन्तु पाप वैसा ही बना रहता है । और प्रायश्चित्त बताने वा कराने वाले को भी नरक होता है ॥ ५४ ॥ जो कुछ पाप किया जाता है वह सब बालों में ठहरता है । इस लिये जो कोई प्रायश्चित्ती केश न मुंडाना चाहे वह भी शिर के सब बालों को इकट्ठा करके ऊपर से दो अंगुल पुछल्ला कटा देवे ॥ ५५ ॥ यदि स्त्री वा कुमारी कन्या को किसी अपराध में प्रायश्चित्त करना पड़े तो स्त्री के शिर के बाल न मुड़ावे किन्तु सब बाल इकट्ठे करके ऊपर से दो अंगुल कटवा देवे । और प्रायश्चित्तके लिये स्त्री अपने घरसे दूर कहीं एकान्तमें अकेली न सोवे न निवास करे॥५६॥

नचगोष्ठेवसेद्रात्रौ नदिवागाअनुव्रजेत् ।
नदीपुसंगमेचैव अरण्येषुविशेषतः ॥ ५७ ॥
नस्त्रीणामजिनंवासो व्रतमेवंसमाचरेत् ।
त्रिसंध्यंस्नानमित्युक्तं सुराणामर्चनंतथा ॥ ५८ ॥
बन्धुमध्येव्रतंतासां कृच्छ्रचान्द्रायणादिकम् ।
गृहेषुसततंतिष्ठेच्छुचिर्नियममाचरेत् ॥ ५९ ॥
इहयोगोवधंकृत्वा प्रच्छादयितुमिच्छति ।
सयातिनरकंघोरं कालसूत्रमसंशयम् ॥ ६० ॥
विमुक्तोनरकात्तस्मान्मर्त्यलोकेप्रजायते ।
क्लीबोदुःखीचकुष्ठीच सप्तजन्मानिवैनरः ॥ ६१ ॥
तस्मात्प्रकाशयेत्पापं स्वधर्मंसततंचरेत् ।
स्त्रीबालभृत्यगोविप्रेष्वतिकोपंविवर्जयेत् ॥ ६२ ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

प्रायश्चित्त के समय स्त्री रात को गोशाला में भी न वसे, न दिन में गौओं के पीछे २ जंगल में जावे, नदियों में तथा नदी के संगम पर भी स्नान को अकेली न जावे और एकान्त वन में भी न रहे ॥ ५७ ॥ प्रायश्चित्त में स्त्रियों के लिये मृग चर्म धारण का भी निषेध है किन्तु स्त्री तीन वार स्नान करे और देवताओं की प्रतिमाओं का पूजन करती हुई प्रायश्चित्त व्रत पूरा करे ॥ ५८ ॥ स्त्रियों को भाई वन्धों के बीच अपने घर में कृच्छ्र चान्द्रायणादि व्रत करना उचित है। निरन्तर अपने घर में ही रहें और शुद्धि आदि के नियमों का पालन ब्रह्मचर्य रखती हुई करे ॥५९॥ इस जगत् में जो कोई पुरुष गोवध करके छिपाना चाहता है वह अवश्यमेव कालसूत्र नामक घोर नरक को प्राप्त होता है इस में कुछ सन्देह नहीं है ॥ ६० ॥ वह गोहिंसक पुरुष उस नरक से छूटने पर मनुष्य लोक में जन्म लेता है। तव सात जन्मों तक नपुंसक तथा कोढ़ी होता हुआ अनेक बड़े २ कठिन दुःख पाता है। इस से गोहत्या वन पड़े तो उसे न छिपा कर प्रायश्चित्त अवश्य करे ॥६१॥ तिस से गोहत्यादि पाप को प्रकाशित करे और अपना धर्म निरन्तर करे। स्त्री, वालक, अपना दास, गौ और ब्राह्मणों पर अत्यन्त क्रोध कदापि न करे ॥ ६२ ॥

यह पाराशरीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में नवम अध्याय पूरा हुआ ॥

चातुर्वर्ण्येषुसर्वेषु हितांवक्ष्यामिनिष्कृतिम् ।
अगम्यागमनेचैव शुद्धौचान्द्रायणंचरेत् ॥ १ ॥
एकैकंह्रासयेद्ग्रासं कृष्णेशुक्लेचवर्द्धयेत् ।
अमावास्यांनभुञ्जीत ह्येषचान्द्रायणेविधिः ॥ २ ॥
कुक्कुटाण्डप्रमाणंतु ग्रासंवैपरिकल्पयेत् ।
अन्यथाभावदुष्टस्य नधर्मोनचशुद्ध्यति ॥ ३ ॥
प्रायश्चित्तेततश्चीर्णे कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ।
गोद्वयंवस्त्रयुग्मंच दद्याद्विप्रेषुदक्षिणाम् ॥ ४ ॥
चाण्डालींवाश्वपाकींवा अनुगच्छतियोद्विजः ।
त्रिरात्रमुपवासीस्याद् विप्राणामनुशासनात् ॥५॥
सशिखंवपनंकृत्वा प्राजापत्यद्वयंचरेत् ।
ब्रह्मकूर्चंततःकृत्वा कुर्याद्ब्राह्मणतर्पणम् ॥ ६ ॥

सब ब्राह्मणादि चारों वर्णों के लिये हितकारी प्रायश्चित्त इस अगले दशवें अध्याय में हम कहेंगे। अगम्या स्त्री के साथ गमन करने पर शुद्धि के लिये चान्द्रायण व्रत करे ॥ १ ॥ जिस मास में चान्द्रायण करे तब पौर्णमासी को १५ ग्रास खाकर कृष्ण प्रतिपदा से एक२ ग्रास घटाया जाय फिर अमावस्या को कुछ न खावे निराहार रहे फिर शुक्ल प्रतिपदा को एक द्वितीया को दो ग्रास खावे ऐसे ही प्रति दिन एक २ बढ़ा के पौर्णमासी को फिर १५ ग्रास खावे यही चान्द्रायण का विधान है ॥२॥ मुरगा के अण्डा के बराबर एक ग्रास का परिमाण जानो। जिस का मन छल कपटादि से दूषित हो वह धर्म करने योग्य नहीं और न उस की प्रायश्चित्तों से शुद्धि होती है ॥३॥ प्रायश्चित्त पूरा होने पर ब्राह्मणों को भोजन करावे। तथा दो गौ और दो वस्त्र ब्राह्मणों को दक्षिणा में देवे ॥ ४ ॥ चाण्डाली वा डौमिनी स्त्री से जो ब्राह्मण समागम करे वह ब्राह्मणों की आज्ञा लेकर प्रथम तीन दिन रात उपवास करे ॥५॥ फिर शिखा सहित शिर के बाल मुंडा के दो प्राजापत्य व्रत करे। तदनन्तर ब्रह्मकूर्च व्रत करके ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ ६ ॥ नित्य गायत्री का जप किया करे। दो गौ दो बैल

गायत्रींचजपेन्नित्यं दद्याद्गोमिथुनद्वयम् ।
विप्रायदक्षिणांदद्याच्छुद्धिमाप्नोत्यसंशयम् ॥ ७ ॥
क्षत्रियोवाऽथवैश्योवा चाण्डालींगच्छतोयदि ।
प्राजापत्यद्वयंकुर्याद् दद्याद्गोमिथुनंतथा ॥ ८ ॥
श्वपाकीमथचाण्डालीं शूद्रोवैयदिगच्छति ।
प्राजापत्यंचरेत्कृच्छ्रं चतुर्गोमिथुनंददेत् ॥ ९ ॥
मातरंयदिगच्छेत्तु भगिनींस्वसुतांतथा ।
एतास्तुमोहितोगत्वा त्रीणिकृच्छ्राणि संचरेत् ॥१०॥
चान्द्रायणत्रयंकुर्याच्छिश्नच्छेदेनशुद्ध्यति ।
मातृष्वसृगमेचैव आत्ममेढ्रनिकृन्तनम् ॥ ११ ॥
अज्ञानेनतुयोगच्छेत्कुर्याच्चान्द्रायणद्वयम् ।
दशगोमिथुनंदद्याच्छुद्धिंपाराशरोऽब्रवीत् ॥ १२ ॥
पितृदारान्समारुह्य मातुराप्तांचभ्रातृजाम् ।
गुरुपत्नींस्नुषांचैव भ्रातृभार्यांतथैवच ॥ १३ ॥

ब्राह्मण को दक्षिणा में देवे तो इतने प्रायश्चित्त से निःसन्देह शुद्ध हो जाता है ॥ ७ ॥ क्षत्रिय वा वैश्य पुरुष यदि चाण्डाली से गमन करें तो दो प्राजापत्य व्रत करके एक गौ एक बैल दक्षिणा में देवें और ब्रह्मभोज करावें ॥ ८ ॥ डोमिनी वा चाण्डाली के साथ यदि शूद्र पुरुष गमन करे तो एक प्राजापत्य कृच्छ्र व्रत करे और चार गौ चार बैल दक्षिणा देवे ॥ ९ ॥ माता, भगिनी, तथा अपनी पुत्री से जो पुरुष मोहाज्ञानग्रस्त हो के गमन करे तो तीन कृच्छ्रव्रत करे ॥ १० ॥ फिर तीन चान्द्रायण व्रत तीन मास तक करे तब शिश्न (लिङ्गेन्द्रिय) को काट डालने पर शुद्ध होता है। और मातृ-श्वसा (मौसी) से गमन करने पर भी अपने इन्द्रिय का छेदन करे काट डाले ॥११॥ और यदि अज्ञान से ऐसा पूर्वोक्त काम करे तो दो मास तक दो चान्द्रायण व्रत करे और दश गौ दश बैल दक्षिणा में देवे । यह शुद्धि महर्षि पराशर ने कही है ॥१२॥ जो पुरुष पिता की अन्य किसी स्त्री (जो अपनी उत्पादिका माता न हों) से गमन करे वा माता की सगी भतीजी से गमन करे वा गुरुपत्नी, पुत्रवधू, भ्रातृ जाया (भौजा—भावज) से गमन करे ॥ १३ ॥ तथा माता की भावज और अपने गोत्र की

मातुलानींसगोत्रांच प्राजापत्यत्रयंचरेत् ।
गोद्वयंदक्षिणांदत्वा मुच्यतेनात्रसंशयः ॥ १४ ॥
पशुवेश्यादिगमने महिष्युष्ट्रीकपींतथा ।
खरींचशूकरींगत्वा प्राजापत्यंसमाचरेत् ॥ १५ ॥
गोगामीचत्रिरात्रेण गामेकांब्राह्मणेददेत् ।
महिष्युष्ट्रीखरीगामी त्वहोरात्रेणशुद्ध्यति ॥१६ ॥
डामरेसमरेवाऽपि दुर्भिक्षेवाजनक्षये ।
वन्दिग्राहेभयार्त्तावा सदास्वस्त्रींनिरीक्षयेत् ॥ १७ ॥
चाण्डालैःसहसंपर्कं यानारीकुरुतेततः ।
विप्रान्दशावरान्कृत्वा स्वकंदोषंप्रकाशयेत् ॥ १८ ॥
आकण्ठसंमितेकूपे गोमयोदककर्द्दमे ।
तत्रस्थित्वानिराहारा त्वहोरात्रेणनिष्क्रमेत् ॥ १९ ॥
सशिखंवपनंकृत्वा भुञ्जीयाद्यावकौदनम् ।
त्रिरात्रमुपवासित्वा त्वेकरात्रंजलेवसेत् ॥ २० ॥

किसी भी स्त्री से गमन करे तो तीन प्राजापत्य व्रत करे । और दो गौ दक्षिणा में देवे तो निःसन्देह पाप से छूट जाता है ॥ १४ ॥ किसी पशु बकरी आदि के साथ तथा वेश्या के साथ गमन करे वा भैंस उंटिनी, वंदरी, गधी, और सूकरी इन सब के साथ मैथुन करने पर प्राजापत्य व्रत करे ॥ १५॥ यदि कोई गऊ से गमन करे तो तीन उपवास करे और एक गौ ब्राह्मण को दान करे । भैंस, उंटिनी, और गधी से गमन करने वाला एक दिन रात व्रत करने पर शुद्ध होता है ॥ १६ ॥ डामर (महा पीड़ा) संग्राम, दुर्भिक्ष, मनुष्यों का नाश, जेलखाना, भय से पीड़ा होने पर इन सब अवसरों में सदा अपनी स्त्री की रक्षा का ध्यान रक्खे विस्मरण न करे ॥ १७ ॥ जो स्त्री चाण्डालों के साथ मैथुन से संसर्ग सहवास कई दिन तक करै तो वह कम से कम दश ब्राह्मणोंसे अपना दोष प्रकाशित करे ॥१८॥ फिर किसी कुएमें कण्ठ तक गहरा गोवर जल कीचड़ मिलाके भरे, उस कीचड़में एक दिन रात निराहार खड़ी रहने बाद निकले ॥ १९ ॥ फिर शिखा सहित सब वाल मुंडाके कुलथी और भात खावे । फिर तीन दिन

शंखपुष्पीलतामूलं पत्रंवाकुसुमंफलम् ।
सुवर्णपञ्चगव्यंच क्वाथयित्वापिबेज्जलम् ॥ २१ ॥
एकभक्तंचरेत्पश्चाद्यावत्पुष्पवतीभवेत् ।
व्रतंचरतितद्यावत्तावत्संवसतेवहिः ॥ २२ ॥
प्रायश्चित्तेततश्चीर्णे कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ।
गोद्वयंदक्षिणांदद्याच्छुद्धिंपाराशरोऽब्रवीत् ॥ २३ ॥
चातुर्वर्ण्यस्यनारीणां कृच्छ्रंचान्द्रायणव्रतम् ।
यथाभूमिस्तथानारी तस्मात्तांनतुदूषयेत् ॥ २४ ॥
बन्दिग्राहेणयाभुक्ता हत्वाबद्ध्वाबलाद्भयात् ।
कृत्वासांतपनंकृच्छ्रं शुद्ध्येत्पाराशरोऽब्रवीत् ॥२५॥
सकृद्भुक्तातुयानारी नेच्छन्तीपापकर्मभिः ।
प्राजापत्येनशुद्ध्येत ऋतुप्रस्रवणेनच ॥ २६ ॥

दिन रात उपवास करके एक दिन रात जल के भीतर बसे ॥ २० ॥ फिर शंखाहूली घास की जड़, पत्ते, फूल वा फलों को और सुवर्ण तथा पञ्चगव्य. इन सब का काढ़ा बनाकर जल पीवे ॥ २१ ॥ फिर जब तक रजस्वला हो तब तक एकबार भोजन करे भूमि पर सोवे । और जब तक इस व्रत को करे तब तक घर से पृथक् बरके किसी भाग में बसे ॥ २२ ॥ फिर प्रायश्चित्त पूरा होने पर ब्राह्मणों को भोजन करावे और दो गौ दक्षिणा में देवे यह शुद्धि महर्षि पराशर ने कही है ॥ २३ ॥ चारो वर्ण की स्त्रियों के लिये दोष लगने पर कृच्छ्रचान्द्रायणव्रत प्रायश्चित्त है क्योंकि स्त्री भूमि के समान है इस से वह सर्वथा त्याज्य नहीं होती है ॥ २४ ॥ यदि किसी पुरुष ने मारपीट कर वा बांधकर वा मारडालने का भय दिखाकर वा जबरदस्ती से हाथ पांव बांध कर स्त्रीसे दुराचार किया हो तो वह स्त्री सान्तपन कृच्छ्र व्रत करके शुद्ध होती है यह पाराशर जी ने कहा है ॥ २५ ॥ पापकर्मी व्यभिचारियों ने जिस इच्छा न रखती हुई शुद्ध स्त्री से एकबार दुराचार किया हो वह प्राजापत्य व्रत करने और रजस्वला होने से शुद्ध होती है ॥ २६ ॥ जिस द्विज की स्त्री मद्य पीती है उसका आधा अङ्ग पतित हो जाता

पतत्यर्द्धंशरीरस्य यस्यभार्यासुरांपिबेत् ।
पतितार्द्धशरीरस्य निष्कृतिर्नविधीयते ॥ २७ ॥
गायत्रींजपमानस्तु कृच्छ्रंसांतपनंचरेत् ॥ २८ ॥
गोमूत्रंगोमयंक्षीरं दधिसर्पिःकुशोदकम् ।
एकरात्रोपवासश्च कृच्छ्रंसांतपनंस्मृतम् ॥ २९ ॥
जारेणजनयेद्गर्भं मृतेत्यक्तेगतेपतौ ।
तांत्यजेदपरेराष्ट्रे पतितांपापकारिणीम् ॥ ३० ॥
ब्राह्मणींतुयदागच्छेत्परपुंसासमन्विता ।
सातुनष्टाविनिर्दिष्टा नतस्यागमनंपुनः ॥ ३१ ॥
कामान्मोहाच्चयागच्छेत्त्यक्त्वाबन्धून्सुतान्पतिम् ।
साऽपिनष्टापरेलोके मानुषेषुविशेषतः ॥ ३२ ॥
मदमोहगतानारी क्रोधाद्दण्डादिताडिता ।
अद्वितीयंगताचैव पुनरागमनंभवेत् ॥ ३३ ॥

है । और जिस का आधा शरीर पतित हो गया उसका यद्यपि कोई प्रायश्चित्त नहीं है ॥ २७ ॥ तथापि गायत्री को जपता हुआ कृच्छ्र सान्तपन व्रत करे ॥ २८ ॥ गोमूत्र, गोमय, गोदुग्ध, गोदधि, गोघृत, और कुश पीसकर निकाला जल इन सब को मिला कर एकदिन खावे और एकदिन उपवास करे तो यह कृच्छ्र सान्तपन व्रत कहाता है ॥ २९ ॥ जो स्त्री अपने पति के त्याग देने पर, पति के कहीं चले जाने पर, वा पतिके मरजाने पर, अन्य जार पुरुष से व्यभिचार द्वारा सन्तान पैदा कर लेवे उस पतित हुई पापिनी स्त्री को राजा स्वदेश से निकालदे अन्य किसी राज्य में भेज देवे ॥ ३० ॥ यदि कोई ब्राह्मणी अन्य पुरुष के साथ मेल करके अपने घर से भाग जावे तो उस को नष्ट भ्रष्ट जानो । वह फिर प्रायश्चित्त द्वारा भी ग्राह्य नहीं है ॥ ३१ ॥ जो स्त्री किसी पुरुष पर कामासक्त होके वा अज्ञान रूप मोह से, अपने पति, पुत्रों और बन्धुओं को त्याग के किसी अन्य पुरुष के साथ निकल जावे वह भी परलोक से नष्ट होती उसका परलोक बिगड़ जाता और विशेष कर यह लोक तो बिगड़ता ही है ॥ ३२ ॥ मद्यादि नशा पीकर वा अज्ञानाहंकार से बिगड़ती हुई स्त्री को क्रोध के साथ पति आदि ने पीटा हो और घर से निकल जावे परन्तु अन्य पुरुष से संपर्क न होने पाया

दशमेतुदिनेप्राप्ते प्रायश्चित्तंनविद्यते ।
दशाहंनत्यजेन्नारीं त्यजेन्नष्टश्रुतांतथा ॥ ३४ ॥
भर्त्ताचैवचरेत्कृच्छ्रं कृच्छ्रार्द्धंचैवबान्धवाः ।
तेषांभुक्त्वाचपीत्वाच अहोरात्रेणशुद्ध्यति ॥३५॥
ब्राह्मणीतुयदागच्छेत्परपुंसाविवर्जिता ।
गत्वापुंसांशतंयाति त्यजेयुस्तांतुगोत्रिणः ॥ ३६ ॥
पुंसोयदिगृहंगच्छेत्तदशुद्धंगृहंभवेत् ।
पितृमातृगृहंयच्च जारस्यैवतुतद्गृहम् ॥ ३७ ॥
उल्लिख्यतद्गृहंपश्चात्पञ्चगव्येनसेचयेत् ।
त्यजेच्चमृन्मयंपात्रं वस्त्रंकाष्ठंचशोधयेत् ॥ ३८ ॥
संभाराञ्छोधयेत्सर्वान्गोकेशैश्चफलोद्भवान् ।
ताम्राणिपञ्चगव्येन कांस्यानिदशभस्मभिः ॥ ३९ ॥

प्रमाण मिले तो उसे फिर अपने घर में रख लेना चाहिये ॥ ३३ ॥ यदि स्त्री को घरसे निकले दश दिन बीत जावें तो उसका प्रायश्चित्त नहीं होसकता । अर्थात् दश दिन तक न त्यागे और दश दिन के भीतर भी स्वधर्म से नष्ट हुई सुनले तो अवश्य त्याग देवे ॥ ३४ ॥ जिस की स्त्री बाहर निकल गई हो वह पति कृच्छ्रव्रत करे और स्त्री के भाई आदि आधा कृच्छ्रव्रत करें । तब उन के घर अन्य विरादरी के लोग खा पीकर एक दिन रात में शुद्ध करें ॥ ३५ ॥ यदि कोई ब्राह्मणी पति आदि के रोकने पर भी अन्य पुरुष के साथ कहीं चली जावे और जाकर सैकड़ों पुरुषों से मेल मिलाप करे वह फिर भी लौट आना चाहे तो कुटुम्बी लोग उस का त्याग ही कर देवें ॥ ३६ ॥ यदि वह ब्राह्मणी पति के घर में आवे तो वह घर अशुद्ध हो जायगा । और यदि अपने मा बाप के घरमें जाके रहे तो वह भी व्यभिचारी जार का घर कहावेगा ॥३७॥ उस घर को ऊपर २ से छील कर फिर से लेपन करके उस में पञ्चगव्य का सेचनकरे उस घर में जितने मट्टी के पात्र हों सब निकाल के फेंक देवे तथा वस्त्रों और काष्ठ के पात्रों की शुद्धि करे ॥ ३८ ॥ फिर घर के सब सामान की शुद्धि करे तथा फल सम्बन्धी तैलादि की शुद्धि गौके वालों से करे । तांबे के पात्रों की पञ्चगव्य के मर्दन से और कांसे के पात्रों की दशवार भस्मों से शुद्धि करे ॥ ३९ ॥ फिर वह ब्राह्मण

प्रायश्चित्तंचरेद्विप्रो ब्राह्मणैरुपपादितम् ।
गोद्वयंदक्षिणांदद्यात्प्राजापत्यद्वयंचरेत् ॥ ४० ॥
इतरेषामहोरात्रं पञ्चगव्येनशोधनम् ।
सपुत्रःसहभृत्यश्च कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ॥ ४१ ॥
उपवासैर्व्रतैःपुण्यैः स्नानसंध्यार्चनादिभिः ।
जपहोमदयादानैः शुद्ध्यन्तेब्राह्मणादयः ॥ ४२ ॥
आकाशंवायुरग्निश्च मेध्यंभूमिगतंजलम् ।
नदुष्यन्तिचदर्भाश्च यज्ञेषुचमसायथा ॥ ४३ ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे दशमोऽध्यायः ॥१०॥

अमेध्यरेतोगोमांसं चाण्डालान्नमथापिवा ।
यदिभुक्तंतुविप्रेण कृच्छ्रंचान्द्रायणंचरेत् ॥ १ ॥
तथैवक्षत्रियोवैश्य–स्तदर्द्धंतुसमाचरेत् ।
शूद्रोऽप्येवंयदाभुङ्क्ते प्राजापत्यंसमाचरेत् ॥ २ ॥

विद्वान् ब्राह्मणों की आज्ञानुसार प्रायश्चित्त करे। अर्थात् दो प्राजापत्य व्रत करे और दो गौ दक्षिणा में देवे ॥ ४० ॥ उस घर के अन्य लोग एक दिन रात पञ्चगव्य पीके उपवास द्वारा शुद्धि करें। फिर पुत्र और भृत्यादि सहित ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ ४१ सामान्य कर उपवास, व्रत, पुण्य, तीर्थादि में स्नान, देवपूजा, जप, होम, दया, दान, इत्यादि कामों के द्वारा ब्राह्मणादि शुद्ध होते हैं ॥ ४२ ॥ आकाश, वायु, अग्नि, शुद्धभूमि में भरा वा नदी में वहता हुआ जल, और दाभ ये पदार्थ नीच के स्पर्शादि से दूषित नहीं होते कि जैसे यज्ञों में सोमरस के चमस उच्छिष्ट नहीं होते ॥ ४३ ॥

यह पाराशरीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में दशवां अध्याय पूरा हुआ ॥

लहसुन आदि अभक्ष्य, वीर्य, गोमांस, चाण्डालका अन्न, यदि ब्राह्मण इन पदार्थों को खा लेवे तो कृच्छ्र चान्द्रायण व्रत करे ॥१॥ वैसे ही क्षत्रिय वा वैश्य उक्त पदार्थों को खावें तो उस से आधा व्रत करें। तथा शूद्र भी उक्त पदार्थों को खावे तो एक प्राजापत्य व्रत करे ॥ २ ॥ फिर शूद्र पञ्चगव्य पीवे और द्विज ब्रह्म कूर्च पीवे। एक

पञ्चगव्यंपिवेच्छूद्रो ब्रह्मकूर्चंपिवेद्द्विजः ।
एकद्वित्रिचतुर्गावो दद्याद्विप्राद्यनुक्रमात ॥ ३ ॥
शूद्रान्नंसूतकस्यान्न-मभोज्यस्यान्नमेवच ।
शङ्कितंप्रतिपिद्धान्नं पूर्वोच्छिष्टंतथैवच ॥ ४ ॥
यदिभुक्तंतुविप्रेण अज्ञानादापदापिवा ।
ज्ञात्वासमाचरेत्कृच्छ्रं ब्रह्मकूर्चंतुपावनम् ॥ ५ ॥
व्यालैर्नकुलमार्जारैरन्नमुच्छिष्टितंयदा ।
तिलदर्भोदकैःप्रोक्ष्य शुद्ध्यतेनात्रसंशयः ॥ ६ ॥
शूद्रोप्यभोज्यंभुक्त्वान्नं पञ्चगव्येनशुद्ध्यति ।
क्षत्रियोवापिवैश्यश्च प्राजापत्येनशुद्ध्यति ॥७॥
एकपङ्क्त्युपविष्टानां विप्राणांसहभोजने ।
यद्येकोऽपित्यजेत्पात्रं शेषमन्नंनभोजयेत् ॥ ८ ॥
मोहाद्भुञ्जीतयस्तत्र पंक्तावुच्छिष्टभोजने ।
प्रायश्चित्तंचरेद्विप्रः कृच्छ्रंसांतपनंतथा ॥ ९ ॥

दो, तीन, तथा चार गौओं का दान चारों वर्ण क्रमसे करें ॥३॥ शूद्र का, सूतक वाले का, जिस २ के अन्न का निषेध किया है उसका, जिसमें अपवित्र होने की शंका हो गई हो, जिस (वासी आदि) का खाना मना किया हो, और जो पहिले भोजन करने से बचा हो ॥ ४ ॥ ऐसा पूर्वोक्त शूद्रादि का अन्न ब्राह्मण ने अज्ञान से वा आपत्काल,में यदि खाया हो तो जानलेने पर कृच्छ्रव्रत करे और ब्रह्मकूर्च भी पवित्र करने वाला है ॥ ५ ॥ जिस अन्नमें से सांप, न्योला और विलाव ने कुछ खाके उच्छिष्ट कर दिया उस मैं का उच्छिष्टांश निकाल कर तिल और दाभ मिलाये जल से मार्जन करने से निःसन्देह शुद्ध हो जाता है शूद्र भी अभोज्य अन्न को खाले तो पञ्चगव्य से शुद्ध होता है। तथा क्षत्रिय और वैश्य भी अशुद्ध वा वर्जित अन्नको खावें तो प्राजापत्य व्रत करने से शुद्ध होते हैं ॥ ७ ॥ एक पांति में बैठ कर एक साथ भोजन करते हुए ब्राह्मणों में से यदि एक मनुष्य भी पत्तल को त्याग देवे तो पङ्क्ति वाले सभी शेष अन्न को उच्छिष्ट समझ कर न खावें ॥ ८ ॥ यदि कोई ब्राह्मण अज्ञान से उस पांतिमें उच्छिष्ट अन्न को खावे तो ब्राह्मण कृच्छ्र सान्तपन व्रत प्रायश्चित्त करे ॥ ९ ॥ गिजरी,

पीयूषंश्वेतलशुनं वृन्ताकफलगृञ्जने ।
पलाण्डुंवृक्षनिर्यासान्देवस्वंकवकानिच ॥ १० ॥
उष्ट्रीक्षीरमवीक्षीर-मज्ञानाद्भक्षयेद्द्विजः ।
त्रिरात्रमुपवासेन पञ्चगव्येनशुद्ध्यति ॥ ११ ॥
मण्डूकंभक्षयित्वातु मूषिकामांसमेवच ।
ज्ञात्वाविप्रस्त्वहोरात्रं यावकान्नेनशुद्ध्यति ॥१२॥
क्षत्रियश्चापिवैश्यश्च क्रियावन्तौशुचिव्रतौ ।
तद्गृहेषुद्विजैर्भोज्यं हव्यकव्येषुनित्यशः ॥ १३ ॥
घृतंक्षीरंतथातैलं गुडंतैलेनपाचितम् ।
गत्वानदीतटेविप्रो भुञ्जीयाच्छूद्रभाजने ॥ १४ ॥
मद्यमांसरतंनित्यं नीचकर्मप्रवर्तकम् ।
तंशूद्रंवर्जयेद्विप्रः श्वपाकमिवदूरतः ॥ १५ ॥
द्विजशुश्रूषणरता-न्मद्यमांसविवर्जितान् ।
स्वकर्मनिरतान्नित्यं ताञ्छूद्रान्नत्यजेद्द्विजः ॥ १६ ॥

(दशदिन के भीतर का गोदुग्ध) सफेद लहसुन, बैंगन, गाजर, प्याज, वृक्षों का गोंद, देवताका धन, कठफूल ॥ १० ॥ ऊंटिनी का दूध, भेड़का दूध इन सब को जो ब्राह्मण अज्ञानसे खावे वह तीन उपवास करके पञ्चगव्य से शुद्ध होता है ॥ ११ ॥ मेंडक, चूहा इन का मांस ब्राह्मण जान कर खालेवे तो एक दिन रात कुलथी अन्न खाने से शुद्ध होता है ॥ १२ ॥ जो क्षत्रिय और वैश्य बाहरी भीतरी सब प्रकार की शुद्धि नियम से रखते हुए सन्ध्या तर्पण पञ्चमहायज्ञादि कर्म यथावत् करते हों उनके घरों में देव पितर सम्बन्धी कामों के समय ब्राह्मणों को सदा भोजन करना चाहिये ॥ १३ ॥ घी, दूध, तैल, गुड़, और तैल से पकाया कोई पदार्थ हो शूद्र के घर के इन सब को नदी किनारे जाकर शूद्र के पात्र में भी ब्राह्मण खा सकता है ॥ १४ ॥ जो मद्य मांस खाने पीने में तत्पर तथा नीच कर्मों का प्रवर्त्तक हो ऐसे शूद्र को चाण्डाल के तुल्य नीच समझ कर ब्राह्मण दूर से त्याग देवे ॥ १५ ॥ मद्य मांस जिन ने त्याग दिया हो ब्राह्मणों की सेवा शुश्रूषामें जो तत्पर हों ऐसे स्वकर्मनिष्ठ शूद्रों का त्याग

अज्ञानाद्भुञ्जतेविप्रः सूतकेमृतकेऽपिवा ।
प्रायश्चित्तंकथंतेषां वर्णेवर्णेविनिर्दिशेत् ॥ १७ ॥
गायत्र्यष्टसहस्रेण शुद्धिःस्याच्छूद्रसूतके ।
वैश्येपञ्चसहस्रेण त्रिसहस्रेणक्षत्रिये ॥ १८ ॥
ब्राह्मणस्ययदाभुङ्क्ते प्राणायामेनशुद्ध्यति ।
अथवावामदेव्येन साम्नाचैकेनशुद्ध्यति ॥१९॥
शुष्कान्नंगोरसंस्नेहं शूद्रवेश्मनआगतम् ।
पक्वंविप्रगृहेभुङ्क्ते भोज्यंतंमनुरब्रवीत् ॥ २० ॥
आपत्कालेतुविप्रेण भुक्तंशूद्रगृहेयदि ।
मनस्तापेनशुद्ध्येत द्रुपदांवशतंजपेत् ॥ २१ ॥
दासनापितगोपाल-कुलमित्रार्द्धसीरिणः ।
एतेशूद्रेषुभोज्यान्ना यश्चात्मानंनिवेदयेत् ॥ २२ ॥

ब्राह्मण न करे ॥१६॥ जो ब्राह्मण लोग अज्ञान से जन्म सूतक में वा मृतक अशुद्धि में किसी के यहां भोजन करते हैं उन का वर्ण २ में प्रायश्चित्त कैसे हो ? ॥ १७ ॥ शूद्रके सूतक में किये भोजन पर आठ हजार गायत्री जपने से शुद्धि होती, वैश्य के घर में भोजन करने से पांच हजार गायत्री का और क्षत्रिय के घरमें सूतक के समय भोजन करे तो तीन हजार गायत्री का जप करने से शुद्धि होती है ॥ १८ ॥ और ब्राह्मण के घर में सूतक के समय खावे तो प्राणायाम करने से ही शुद्ध हो जाता है। अथवा एक वार वामदेव्य साम का गान करने से शुद्ध हो जाता है ॥१६॥ सूखा अन्न, गोरस, घी, तैल, इन को शूद्र के घर से लेकर ब्राह्मण के घर में पकाने पर भोजन करने योग्य पवित्र होजाता है यह मनुजी ने कहाहै ॥२०॥ यदि आपत्काल में ब्राह्मणने शूद्रके घरमें भोजन कर लिया हो तो मन में पश्चात्ताप करने से शुद्ध हो जाता है और (द्रुपदादिव०) मन्त्र को एक सौ जप लेवे ॥२१॥ दास नाम कहार, नाई, आभीर (अहीर) अपने कुल का मित्र, (कुल मित्र शब्द का अपभ्रंश-कुर्मी हुआ हो यह भी सम्भव है) खेती में आधा साझी, ये सब शूद्रों में भोजन करने योग्य हैं अर्थात् इनका तथा शरणागत शूद्र का सूखा अन्न आटा दाल आदि भोजनार्थ लेने में ब्राह्मण को दोष नहीं लगता है ॥ २२ ॥ ब्राह्मण से शूद्र की कन्या में जो सन्तान पैदा हो उस का संस्कार यदि

शूद्रकन्यासमुत्पन्नो ब्राह्मणेनतुसंस्कृतः ।
संस्कृतस्तुभवेद्दासो ह्यसंस्कारैस्तुनापितः ॥ २३ ॥
क्षत्रियाच्छूद्रकन्यायां समुत्पन्नस्तुयःसुतः ।
सगोपालइतिख्यातो भोज्योविप्रैर्नसंशयः ॥ २४ ॥
वैश्यकन्यासमुद्भूतो ब्राह्मणेनतुसंस्कृतः ।
सह्यार्द्धिकइतिज्ञेयो भोज्योविप्रैर्नसंशयः ॥ २५ ॥
भाण्डस्थितमभोज्येषु जलंदधिघृतंपयः ।
अकामतस्तुयोभुङ्क्ते प्रायश्चित्तंकथंभवेत् ॥ २६ ॥
ब्राह्मणःक्षत्रियोवैश्यः शूद्रोवाप्युपसर्पति ।
ब्रह्मकूर्चोपवासेन यथावर्णस्यनिष्कृतिः ॥ २७ ॥
शूद्राणांनोपवासःस्याच्छूद्रोदानेनशुद्ध्यति ।
ब्रह्मकूर्चमहोरात्रं श्वपाकमपिशोधयेत् ॥ २८ ॥

ब्राह्मण ने कराया हो तो वह दास (कहार) माना जावे और यदि संस्कार न हो तो वह नाई होगा । (यहां संस्कार पद से ब्राह्मण द्वारा पालन पोषण अर्थ लेना चाहिये) ॥ २३ ॥ क्षत्रिय पुरुष से शूद्र की कन्या में जो सन्तान पैदा हो उसको गोपाल कहते हैं । ब्राह्मण लोग उस गोपाल का अन्न खा सकते हैं इस में सन्देह नहीं ॥ २४ ॥ क्षत्रिय से वैश्य की कन्या में जो सन्तान पैदा हो और ब्राह्मण उसका संस्कार करे तो वह आर्द्धिक कहाता है और ब्राह्मण लोग उस का अन्न निःसन्देह खावें ॥ २५ ॥ जिन का अन्न खाना वर्जित है उनके पात्र में रक्खा जल, दही, घी, वा दूध इन को जो कामना के विना खाता है उस का प्रायश्चित्त कैसे हो ? ॥ २६ ॥ ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, और शूद्र यदि उक्त अपराध का प्रायश्चित्त धर्म सभा से चाहें तो ब्रह्मकूर्च रूप उपवास से यथा योग्य भिन्न २ प्रकार वर्णों का प्रायश्चित्त जानो ॥ २७ ॥ शूद्रों के लिये ब्रह्मकूर्चादि का पान वा उपवास करना निषिद्ध है किन्तु शूद्रदान करने से शुद्ध हो जाता है । ब्राह्मणादि द्विज पुरुष एक दिन रात ब्रह्मकूर्च उपवास करे तो चाण्डाल के तुल्य लगे दोष को भी यह व्रत शुद्ध कर देता है ॥ २८ ॥ (अब तक पूर्व में कई

गोमूत्रंगोमयंक्षीरं दधिसर्पिःकुशोदकम् ।
निर्दिष्टंपञ्चगव्यंच पवित्रंपापशोधनम् ॥ २९ ॥
गोमूत्रंकृष्णवर्णायाः श्वेतायाश्चैवगोमयम् ।
पयश्चताम्रवर्णाया रक्तायागृह्यतेदधि ॥ ३० ॥
कपिलायाघृतंग्राह्यं सर्वंकापिलमेववा ।
मूत्रमेकपलंदद्यादङ्गुष्ठार्द्धंतुगोमयम् ॥ ३१ ॥
क्षीरंसप्तपलंदद्याद्दधित्रिपलमुच्यते ।
घृतमेकपलंदद्यात्पलमेकंकुशोदकम् ॥ ३२ ॥
गायत्र्यादायगोमूत्रं गन्धद्वारेतिगोमयम् ।
आप्यायस्वेतिचक्षीरं दधिक्राव्णस्तथादधि ॥ ३३ ॥
तेजोसिशुक्रमित्याज्यं देवस्यत्वाकुशोदकम् ।
पञ्चगव्यमृचापूतं स्थापयेदग्निसन्निधौ ॥ ३४ ॥

वार ब्रह्मकूर्च उपवास का प्रसंग आ चुका है सो अब यहांसे ४० श्लोक तक ब्रह्मकूर्च का विधान कहते हैं सो जहां २ ब्रह्मकूर्च कहा है वहां २ इसी विधान को जान लेना) गोमूत्र, गोबर, गोदुग्ध, गोदधि, गोघृत, और कुशों को पीस कर निचोड़ा जल इस प्रकार कुशोदक और पञ्चगव्य का निम्न रीति से सेवन करना परम पवित्र होने से पापों का शोधन करने वाला है ॥२६॥ काली गौ का गोमूत्र लेवे, श्वेत गौ का गोबर लेवे, ताम्र वर्ण गौ का दूध लेवे, लाल गौ का दही ॥ ३० ॥ कपिला गौ का घी लेना चाहिये । अथवा गोमूत्रादि सभी कपिला गौ का लेवे । एक पल (चार तोला) गोमूत्र; अपने आधे अंगूठे भर गोबर ॥३१॥ सात पल (अट्टाईश तोला) गौ का दूध लेवे; तीन पल (१२ तोला) दही, एक पल (४ तोला) घी और एक पल कुशोदकलेवे ॥३२॥ (तत्सवितु०) गायत्रीसे गोमूत्र, (गन्धद्वारा०) लक्ष्मीसूक्त के मन्त्रसे गोबर, (आप्यायस्व समेतु० यजु० अ० २।११२) मन्त्रसे दूध, (दधि क्राव्णोअक्का० यजु० अ० २३।३२) मंत्रसे दही (तेजोऽसिशुक्रमस्य० यजु० १।३१) मन्त्र से घी, (देवस्यत्वा० हस्ताभ्यां गृहामि यजु० अ० १।१०) मन्त्रसे कुशोदक लेवे । इस प्रकार ऋचाओंसे पवित्र किये पञ्चगव्य तथा कुशोदक को लेकर अग्निकुण्ड के समीप स्थापित करे ॥३३ । ३४॥ फिर (आपो-

आपोहिष्ठेतिचालोड्य मानस्तोकेतिमन्त्रयेत् ।
सप्तावरास्तुयेदर्भा अच्छिन्नाग्राःशुकत्विषः ॥३५॥
एतैरुद्धृत्यहोतव्यं पञ्चगव्यंयथाविधि ।
इरावतीइदंविष्णुर्मानस्तोकेचशंवती ॥ ३६ ॥
एताभिश्चैवहोतव्यं हुतशेषंपिवेद्द्विजः ॥ ३७ ॥
आलोड्यप्रणवेनैव निर्मथ्यप्रणवेनतु ।
उद्धृत्यप्रणवेनैव पिवेच्चप्रणवेनतु ॥ ३८ ॥
यत्त्वगस्थिगतंपापं देहेतिष्ठतिदेहिनाम् ।
ब्रह्मकूर्चोदहेत्सर्वं यथैवाग्निरिवेन्धनम् ॥ ३९ ॥
पवित्रंत्रिषुलोकेषु देवताभिरधिष्ठितम् ।
वरुणश्चैवगोमूत्रे गोमयेहव्यवाहनः ।
दध्निवायुःसमुद्दिष्टः सोमःक्षीरेघृतेरविः ॥ ४० ॥

हिष्ठा० यजु० अ० ११ । ५०) इत्यादि तीन मन्त्रों से गोमूत्रादि सब को मिला के (आलोडन करके) (मानस्तोके० यजु० अ० १६ । १६) मन्त्र से अभिमन्त्रण करे अर्थात् मन्त्र पढ़ता हुआ गोमूत्रादि को देखे । फिर जिनका अग्रभाग न टूटा हो ऐसे ठीक २ हरे कम से कम सात दाभों से ॥ ३५ ॥ कुशोदक सहित पञ्चगव्य को ले २ कर निम्न मन्त्रों से यथाविधि होम करे । (इरावती धेनुमती० यजु० अ० ५ । १६) (इदं विष्णुर्वि० यजु० अ० ५ । १५) (मानस्तोकेतनये० यजु० अ० १६ । १६) और यजु० अ० ३६ के (शंनो मित्रः०) इत्यादि शं शब्द वाले मन्त्रों से ॥ ३६ ॥ होम करे फिर होम से शेष बचे भागको निम्न प्रकार पीवे ॥ ३७ ॥ ओंकार से आलोडन कर ओंकार से मन्थन कर ओंकार से ही उठाकर तथा ओंकार पढ़ के ही पीवे ॥ ३८ ॥ जो पाप मनुष्यों के शरीर की त्वचा तथा हड्डियों में भी पैठ गया हो उस सब को यह ब्रह्मकूर्च ऐसे ही भस्म कर देता है जैसे कि ईंधन को अग्नि जलावे ॥ ३६ ॥ यह ब्रह्मकूर्च अनेक देवताओं से अधिष्ठित होने से तीनों लोक में अति पवित्र है । गोमूत्र में वरुण देवता, गोबर में अग्नि, दही में वायु, दूध में सोम, और घी में सूर्य नारायण विराजते हैं ॥ ४० ॥ जल पीते समय मुख से निकल के जलपात्र में जूठा

पिबतःपतितंतोयं भाजनेमुखनिःसृतम् ।
अपेयंतद्विजानीयाद् भुक्त्वाचान्द्रायणंचरेत् ॥ ४१ ॥
कूपेचपतितंदृष्ट्वा श्वशृगालौचमर्कटम् ।
अस्थिचर्मादिपतिताः पीत्वामेध्याअपोद्विजः ॥४२॥
नारंतुकुणपंकाकं विड्वराहंखरोष्ट्रकम् ।
गावयंसौप्रतीकंच मायूरंखाड्गकंतथा ॥ ४३ ॥
वैयाघ्रमार्क्षंसैंहंवा कूपेयदिनिमज्जति ॥ ४४ ॥
तडागस्याऽपिदुष्टस्य पीतंस्यादुदकंयदि ।
प्रायश्चित्तंभवेत्पुंसः क्रमेणैतेनसर्वशः ॥ ४५ ॥
विप्रःशुद्ध्येत्त्रिरात्रेण क्षत्रियस्तुदिनद्वयात् ।
एकाहेनतुवैश्यश्च शूद्रोनक्तेनशुद्ध्यति ॥ ४६ ॥
परपाकनिवृत्तस्य परपाकरतस्यच ।
अपचस्यचभुक्त्वान्नं द्विजश्चान्द्रायणंचरेत् ॥४७॥
अपचस्यतुयद्दानंदातुरस्यकुतःफलम् ।
दाताप्रतिग्रहीताच द्वौतौनिरयगामिनौ ॥ ४८ ॥

जल गिरजाय तो वह पात्र का जल पीने योग्य नहीं है। यदि उसको पीलेवे तो चान्द्रायण व्रत करे ॥ ४१ ॥ यदि कुए में कुत्ता, गीदड़, बन्दर, हाड़, चाम आदि गिरे हुए देखकर भी द्विज पुरुष उस अशुद्ध जल को पी लेवे ॥ ४२ ॥ मनुष्य का मुर्दा देह, कौवा, विष्ठा खाने वाला सूअर, गधा, ऊंट, गवय, (नीलगाय) हाथी, मोर, गेंडा, ॥ ४३ ॥ वाघ, रीछ, सिंह, ये यदि कूप में डूब जांय ॥४४॥ और तालाव का विगड़ा हुआ खराब दुर्गंध युक्त जल भी यदि पीया जाय तो पुरुषों का क्रमसे यह निम्न प्रायश्चित्त है कि ॥ ४५ ॥ ब्राह्मण तीन दिन रात, क्षत्रिय दो दिन रातके उपवाससे, वैश्य एक दिन रात के उपवास से और शूद्र रातभर के उपवास से शुद्ध होता है ॥ ४६ ॥ जो पुरुष परपाक से निवृत्त हो और जो परपाक रत हो इन दोनों का और १५ श्लोक में कहे अपच का अन्न खाकर ब्राह्मण चान्द्रायण व्रत करे ॥ ४७ ॥ अपच पुरुष को जो दान देवे उस का दाता को फल कहां ? दान का दाता और लेने वाला ये दोनों नरक

गृहीत्वाग्निंसमारोप्य पञ्चयज्ञान्ननिर्वपेत् ।
परपाकनिवृत्तोऽसौ मुनिभिःपरिकीर्त्तितः ॥ ४९ ॥
पञ्चयज्ञान्स्वयंकृत्वा परान्नेनोपजीवति ।
सततंप्रातरुत्थाय परपाकरतस्तुसः ॥ ५० ॥
गृहस्थधर्मैर्योविप्रो ददातिपरिवर्जितः ।
ऋषिभिर्धर्मतत्त्वज्ञैरपचःपरिकीर्तितः ॥ ५१ ॥
युगेयुगेतुयेधर्मास्तेषुतेपुचयेद्विजाः ।
तेषांनिन्दानकर्तव्या युगरूपाहितेद्विजाः ॥ ५२ ॥
हुंकारंब्राह्मणस्योक्त्वा त्वंकारंचगरीयसः ।
स्नात्वातिष्ठन्नहःशेषमभिवाद्यप्रसादयेत् ॥ ५३ ॥
ताडयित्वातृणेनापि कण्ठेबध्वापिवाससा ।
विवादेनापिनिर्जित्य प्रणिपत्यप्रसादयेत् ॥ ५४ ॥

में जाते हैं ॥ ४८ ॥ जो पुरुष अग्नि को स्थापन करके अरणी में समारोप करके पञ्चमहायज्ञ न करै। मुनियों ने उसको "परपाक निवृत्त" कहा है ॥ ४९ ॥ और जो नित्य प्रातःकाल उठकर आप ही पञ्चमहायज्ञ करके अन्य के पकाये अन्न को खाता हो वह "परपाकरत" कहोता हैं ॥ ५० ॥ अर्थात् ये दोनों ही बुरे निन्दित हैं। पर नाम वैश्व देवार्थ अन्न पकाना चाहिये उसी का शेष खाना अमृतभोजन है। और पर नाम अन्य के पकाये में खाने की रुचि न रक्खे। गृहस्थों के धर्म में तत्पर जो ब्राह्मण हो और दान धर्म से वर्जित हो (दान कुछ न देता हो अर्थात् पञ्चमहायज्ञों द्वारा देवतादि को भी कुछ न देता हो (धर्म तत्त्व के ज्ञाता ऋषियों ने उसे "अपच" कहा है ॥ ५१ ॥ युग २ में जो भिन्न २ धर्म हैं उन २ धर्मों में तत्पर जो ब्राह्मण उन ब्राह्मणों की निन्दा नहीं करनी चाहिये क्योंकि वे ब्राह्मण युग के अनुरूप हैं सद्युगी, त्रेतायुगी द्वापरयुगी, और कलियुगी ब्राह्मण भिन्न २ होंगे। कलिमें अन्य युगों कैसे ब्राह्मण हो-ही नहीं सकते ॥ ५२ ॥ बड़े विद्वान् धर्मनिष्ठ ब्राह्मण को हुंकार और किसी मान्य पुरुष से त्वंकार (हुंः वा तूं) जिस समय कहे उस समय जितना दिन शेष हो उतने कालतक स्नात करके खड़ा रहै फिर अभिवादन करके प्रसन्न (राजी) करे ॥ ५३ ॥ तृण से भी ब्राह्मण को ताड़ना करके और ब्राह्मण के कण्ठ में वस्त्र भी बांधकर अथवा ब्राह्मण को शास्त्रार्थ में जीतकर नमस्कार करके प्रसन्न करे ॥ ५४ ॥

अवगूर्य्यत्वहोरात्रं त्रिरात्रंक्षितिपातने ।
अतिकृच्छ्रं चरुधिरे कृच्छ्रमन्तरशोणिते ॥ ५५ ॥
नवाहमतिकृच्छ्रोस्यात्पाणिपूरान्नभोजनम् ।
त्रिरात्रमुपवासःस्यादतिकृच्छ्रःसउच्यते ॥ ५६ ॥
सर्वेषामेवपापानां संकरेसमुपस्थिते ।
शतंसाहस्रमभ्यस्ता गायत्रीशोधनंपरम् ॥ ५७ ॥

इति पाराशरीये धर्म्मशास्त्र एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

दुःस्वप्नंयदिपश्येत्तु वान्तेवाक्षुरकर्मणि ।
मैथुनेप्रेतधूमेच स्नानमेवविधीयते ॥ १ ॥
अज्ञानात्प्राश्यविण्मूत्रं सुरासंस्पृष्टमेवच ।
पुनःसंस्कारमर्हन्ति त्रयोवर्णाद्विजातयः ॥ २ ॥
अजिनंमेखलादण्डो भैक्षचर्याव्रतानिच ।
निवर्त्तन्तेद्विजातीनां पुनःसंस्कारकर्मणि ॥ ३ ॥

ब्राह्मण की ओर गुर्रा कर वा ऐंठ दिखा के एक दिन रात और पृथिवी पर पटक देकर तीन दिन रात उपवास करे। ब्राह्मण के रुधिर निकालने पर अतिकृच्छ्र व्रत करे और रुधिर न निकले किन्तु दवी चोट लगे तो कृच्छ्रव्रत करे ॥ ५५ ॥ जो नौ ९ दिन तक पकाया हुआ अंजलि भर अन्न खावे और अन्त में तीन दिन रात उपवास करे उसे अतिकृच्छ्र कहते हैं ॥ ५६ ॥ यदि सब पापों का संकर होजाय अर्थात् अनेक प्रकार के अनेक पाप जिस ने किये हों वह सौहजार (एक लाख) वा सवा लाख गायत्री का अभ्यास जप करे यह अनुष्ठान परम शुद्धि करने वाला है ॥ ५७ ॥

यह पाराशरीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में ग्यारहवां अध्याय पूरा हुआ ॥

वमन, क्षौर कर्म, मैथुन, प्रेत का धूम, इन विषयों में वा इन का खोटा स्वप्न देखे तो तत्काल स्नान करना कहा है ॥ १ ॥ अज्ञान से विष्ठा, मूत्र, और जिस में मदिरा मिली हो उस को खाकर ब्राह्मणादि तीनों द्विजाति फिर से यज्ञोपवीत संस्कार के योग्य होते हैं ॥ २ ॥ द्विजातियों के फिर (दुबारा) उपनयन संस्कार कर्म में मृग छाला, मौञ्जी मेखला, पलाशादि का दंड, भिक्षा मांगने के नियम, ये सब निवृत्त हो जाते हैं ॥ ३ ॥ पुनः संस्कार हो जाने पर भक्षण किये विष्ठा मूत्र की शुद्धि के लिये

विण्मूत्रस्यचशुद्ध्यर्थं प्राजापत्यंसमाचरेत् ।
पञ्चगव्यंचकुर्वीत स्नात्वापीत्वाशुचिर्भवेत् ॥ ४ ॥
जलाग्निपतनेचैव प्रव्रज्यानाशकेषुच ।
प्रत्यवसितवर्णानां कथंशुद्धिर्विधीयते ॥ ५ ॥
प्राजापत्यद्वयेनैव तीर्थाभिगमनेनच ।
वृषैकादशदानेन वर्णाःशुद्ध्यन्तितेत्रयः ॥ ६ ॥
ब्राह्मणस्यप्रवक्ष्यामि वनंगत्वाचतुष्पथे ।
सशिखंवपनंकृत्वा प्राजापत्यद्वयंचरेत् ॥ ७ ॥
गोद्वयंदक्षिणांदद्याच्छुद्धिंपाराशरोऽब्रवीत् ।
मुच्यतेतेनपापेन ब्राह्मणत्वंचगच्छति ॥ ८ ॥
स्नानानिपञ्चपुण्यानि कीर्त्तितानिमनीषिभिः ।
आग्नेयंवारुणंब्राह्मं वायव्यंदिव्यमेवच ॥ ९ ॥
आग्नेयंभस्मनास्नानमवगाह्यतुवारुणम् ।
आपोहिष्ठेतिचब्राह्मं वायव्यं गोरजःस्मृतम् ॥ १० ॥

प्राजापत्य व्रत करै और पंचगव्य बनावै तब स्नान करके पंचगव्य को पीकर शुद्ध होते हैं ॥ ४ ॥ स्नान का नियम बिगड़ने, वा स्थापित अग्नि के बुत जाने पर और संन्यास धर्म को बिगाड़ने वाला कोई काम बन पड़े तो हीन हुए तीनों वर्णों की कैसे शुद्धि हो सो कहते हैं ॥ ५ ॥ दो प्राजापत्य व्रतों से, तीर्थों की यात्रा से, ग्यारह बैलों का दान करने से, वे तीनों वर्ण क्रम से शुद्ध होते हैं ॥ ६ ॥ उन में ब्राह्मण का प्रायश्चित्त प्रथम कहते हैं। वह ब्राह्मण वन में जाकर चौराहे पर शिखा सहित सब बालों का मुंडन कराके दो प्राजापत्य व्रत करै ॥ ७ ॥ फिर दो गौ दक्षिणा में देवे यह शुद्धि पाराशर ने कही है। फिर ब्राह्मण उस पाप से छूट जाता है और ब्राह्मणपन को प्राप्त हो जाता है ॥ ८ ॥ मुनि लोगों ने पांच स्नान पवित्र कहे हैं १ आग्नेय, २ वारुण, ३ ब्राह्म, ४ वायव्य, ५ दिव्य, ॥ ९ ॥ भस्म से किया स्नान आग्नेय, जल से किये को वारुण, (आपो हिष्ठा०) इन तीन आदि मंत्रों से किये स्नान को ब्राह्म, गौओं के पगों से उड़ी धूलि से किये को वायव्य स्नान, कहते हैं ॥ १० ॥ और जो वर्षा के समय धूप भी निकल रही हो उस समय मेघ की बूंदों से जो स्नान करे उसे

यत्तुसातपवर्षेण स्नानंतद्दिव्यमुच्यते ।
तत्रस्नात्वातुगंगायां स्नातोभवतिमानवः ॥ ११ ॥
स्नातुंयान्तंद्विजंसर्वे देवाःपितृगणैःसह ।
वायुभूतास्तुगच्छन्ति तृषार्त्ताःसलिलार्थिनः ॥ १२ ॥
निराशास्तेनिवर्तन्ते वस्त्रनिष्पीडनेकृते ।
तस्मान्नपीडयेद्वस्त्रमकृत्वापितृतर्पणम् ॥ १३ ॥
रोमकूपेष्ववस्थाप्य यस्तिलैस्तर्पयेत्पितॄन् ।
तर्पितास्तेनतेसर्वे रुधिरेणमलेनच ॥ १४ ॥
अवधूनोतियःकेशान् स्नात्वाप्रस्रवतोद्विजः ।
आचामेद्वाजलस्थोपि बाह्यःसपितृदैवतैः ॥ १५ ॥
शिरःप्रावृत्यकण्ठंवा मुक्तकच्छशिखोपिवा ।
विनायज्ञोपवीतेन आचान्तोप्यशुचिर्भवेत् ॥ १६ ॥
जलेस्थलस्थोनाचामेज्जलस्थश्चवहिस्थले ।
उभेस्पृष्ट्वासमाचामेदुभयत्रशुचिर्भवेत् ॥ १७ ॥

दिव्य स्नान कहते हैं क्योंकि उस वर्षा में स्नान करके मनुष्य को गंगा के स्नान का फल होता है ॥ ११ ॥ जिस समय ब्राह्मण स्नान करने को जाता है उस समय सब देवता, पितरों के सहित तृषा से पीड़ित हुए जल के लिये वायु का रूप धारण करके ब्राह्मण के पीछे २ चलते हैं ॥१२॥ यदि वह ब्राह्मण तर्पण करने से पहिले वस्त्र (धोती) निचोड़ ले तो वे निराश होकर लौट जाते हैं। तिससे देव, ऋषि, पितरों का तर्पण किये विना वस्त्र को न निचोड़े ॥ १३ ॥ रोमों को पौंछकर जो मनुष्य तिलों द्वारा पितरों का तर्पण करता है उसने अपने रुधिर और मल से उन सब पितरों को तृप्त किया जानो ॥ १४ ॥ जो द्विज ब्राह्मण स्नान करके टपकते हुए केशों को झाड़ता है और जल के भीतर खड़ा या बैठा आचमन करता है वह मनुष्य पितर और देवताओं से बाह्य (देव कर्म पितृ कर्मके अयोग्य) है ॥१५॥ शिर वा कंठको बांध कर कांछ खोलके वा शिखाको खोलकर, अथवा जनेऊके विना जो आचमन करता है वह आचमन करके भी अशुद्ध ही रहता है ॥ १६ ॥ स्थल में बैठा मनुष्य जल में और जल में बैठा स्थल में आचमन न करै किन्तु स्थल में बैठा हो तो स्थल में ही आचमन करे और जल में बैठा हो तो जल में ही आचमन करे तो शुद्ध होता है ॥ १७ ॥ आचमन किये पीछे

स्नात्वापीत्वाक्षुतेसुप्ते भुक्त्वारथ्योपसर्पणे ।
आचान्तःपुनराचामेद्वासोविपरिधायच ॥ १८ ॥
क्षुतेनिष्ठीवनेचैव दन्तोच्छिष्टेतथाऽनृते ।
पतितानांचसंभाषे दक्षिणंश्रवणंस्पृशेत् ॥ १९ ॥
ब्रह्माविष्णुश्चरुद्रश्च सोमःसूर्योऽनिलस्तथा ।
तेसर्वेह्यपितिष्ठन्ति कर्णेविप्रस्यदक्षिणे ॥ २० ॥
भास्करस्यकरैःपूतं दिवास्नानंप्रशस्यते ।
अप्रशस्तंनिशिस्नानं राहोरन्यत्रदर्शनात् ॥ २१ ॥
मरुतोवसवोरुद्रा आदित्याश्चाथदेवताः ।
सर्वेसोमेप्रलीयन्ते तस्मात्स्नानंतुतद्ग्रहे ॥ २२ ॥
खलयज्ञेविवाहेच संक्रान्तौग्रहणेतथा ।
शर्वर्य्यांदानमस्त्येव नाऽन्यत्रतुविधीयते ॥ २३ ॥
पुत्रजन्मनियज्ञेच तथाचात्ययकर्मणि ।
राहोश्चदर्शनेदानं प्रशस्तंनान्यदानिशि ॥ २४ ॥

यदि स्नान करे, जल पीवे, छींक आवे, सोवे, खावे, अथवा मार्ग में चले, वस्त्र पहने, (कपड़ा बदले) तो फिर से आचमन करे ॥१८॥ छींकना, थूकना, दांतों में उच्छिष्ट (झूठन) निकलना, अथवा झूठ बोलना, वा पतितों के संग संभाषण करना, इन के होने पर ब्राह्मण अपने दहिने कान का स्पर्श करे ॥ १९ ॥ ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, सोम, सूर्य, वायु, ये सब देवता ब्राह्मण के दहिने कान में रहते हैं ॥ २० ॥ सूर्य की किरणों से पवित्र हुआ जो दिन में स्नान करना है वह उत्तम है और राहु के द्वारा हुए चन्द्र ग्रहण को छोड़ कर रात्रि का स्नान अधम कहा है ॥ २१ ॥ उञ्चास मरुत्, आठ वसु, ग्यारह रुद्र, और बारह आदित्य, ये सब देवता चन्द्रग्रहण के समय चन्द्रमा में लीन होते (छिप जाते हैं) तिससे चन्द्रग्रहण का मोक्ष होने पर स्नान अवश्य करे ॥ २२ ॥ खलियान में होने वाले खलयज्ञ, विवाह, संक्रान्ति, और चन्द्र ग्रहण इनमें रात्रि मेंभी दान कहा ही है अन्यत्र नहीं ॥ २३ ॥ पुत्रका जन्म होने पर, यज्ञ में मृतक के कर्म में, राहु के दर्शन (ग्रहण) में; इन ही अवसरों पर रात्रि में दान करना उत्तम कहा है

महानिशातुविज्ञेया मध्यस्थंप्रहरद्वयम् ।
प्रदोषपश्चिमौयामौ दिनवत्स्नानमाचरेत् ॥ २५ ॥
चैत्यवृक्षश्चितिस्थश्च चाण्डालःसोमविक्रयी ।
एतांस्तुब्राह्मणःस्पृष्ट्वा सवासाजलमाविशेत् ॥ २६ ॥
अस्थिसंचयनात्पूर्वं रुदित्वास्नानमाचरेत् ।
अन्तर्दशाहेविप्रस्य ह्यूर्ध्वमाचमनंस्मृतम् ॥ २७ ॥
सर्वंगंगासमंतोयं राहुग्रस्तेदिवाकरे ।
सोमग्रहेतथैवोक्तं स्नानदानादिकर्मसु ॥ २८ ॥
कुशैःपूतंभवेत्स्नानं कुशेनोपस्पृशेद्द्विजः ।
कुशेनचोद्धृतंतोयं सोमपानसमंभवेत् ॥ २९ ॥
अग्निकार्यात्परिभ्रष्टा संध्योपासनवर्जिताः ।
वेदंचैवानधीयानाः सर्वेतेवृषलाःस्मृताः ॥ ३० ॥
तस्माद्वृषलभीतेन ब्राह्मणेनविशेषतः ।
अध्येतव्योप्येकदेशो यदिसर्वंनशक्यते ॥ ३१ ॥

अन्यत्र नहीं ॥ २४ ॥ रात्रि के बीच के दो पहरों को महानिशा कहते है । इस से सायंकाल तथा प्रातःकाल की रात के दो प्रहरों में दिन के समान स्नान दानादि करै ॥ २५ ॥ चैत्य का वृक्ष जो मरघट पर उगाहो, चिता, चांडाल, यज्ञ में सोम लता का बेंचने वाला, इन का स्पर्श करके ब्राह्मण सचैल स्नान करै ॥ २६ ॥ अस्थि संचयन (मरे के फूल इकट्ठे करने) से पहिले रोवे तो स्नान करै । ब्राह्मणों को दशदिन के भीतर रोने पर स्नान करना और दशदिन बीते पर आचमन करना कहा है ॥ २७ ॥ जिस समय राहु, सूर्य वा चन्द्रमा को ग्रसे उस समय स्नान दान आदि कर्मों में सब जल गंगा जल के समान कहे है ॥ २८ ॥ कुशों से मार्जन पूर्वक स्नान करना पवित्र कारक होता है और कुशों से ही ब्राह्मणादि द्विज आचमन करें क्योंकि कुशों से उठाया जल सोम के पीने तुल्य पवित्र होता है ॥ २९ ॥ जो ब्राह्मण अग्नि-होत्र से भ्रष्ट और संध्योपासन से वर्जित हैं और विधिपूर्वक वेद को भी नहीं पढ़ते वे सब शूद्र के तुल्य कहे हैं ॥ ३० ॥ इस कारण शूद्र हो जाने के भय से विशेष कर ब्राह्मण को चाहिये कि यदि सब वेद को न पढ़ सके तो वेद का कोई एक भाग ही

शूद्रान्नरसपुष्टस्याप्यधीयानस्यनित्यशः ।
जपतोजुह्वतोवापि गतिरूर्ध्वानविद्यते ॥ ३२ ॥
शूद्रान्नंशूद्रसंपर्कः शूद्रेणतुसहासनम् ।
शूद्राज्ज्ञानागमश्चापि ज्वलन्तमपिपातयेत् ॥ ३३ ॥
यःशूद्र्यापाचयेन्नित्यं शूद्रीचगृहमेधिनी ।
वर्जितःपितृदेवेभ्यो रौरवंयातिसद्विजः ॥ ३४ ॥
मृतसूतकपुष्टाङ्गं द्विजंशूद्रान्नभोजिनम् ।
अहंतन्नविजानामि कांकांयोनिंगमिष्यति ॥ ३५ ॥
गृध्रोद्वादशजन्मानि दशजन्मानिसूकरः ।
श्वयोनौसप्तजन्मानि इत्येवंमनुरब्रवीत् ॥ ३६ ॥
दक्षिणार्थंतुयोविप्रः शूद्रस्यजुहुयाद्धविः ।
ब्राह्मणस्तुभवेच्छूद्रः शूद्रस्तुब्राह्मणोभवेत् ॥ ३७ ॥
मौनव्रतंसमाश्रित्य आसीनोनवदेद्द्विजः ।
भुञ्जानोहिवदेद्यस्तु तदन्नंपरिवर्जयेत् ॥ ३८ ॥

पढ़े ॥ ३१ ॥ जो ब्राह्मण शूद्र के दिये अन्न को खाके पुष्ट हुआ हो वह प्रतिदिन वेदका अध्ययन, जप, तथा होम करता हुआ भी स्वर्ग को प्राप्त नहीं होता ॥ ३२ ॥ शूद्र का अन्न शूद्र का संपर्क, (मेल) शूद्र के संग एक जगह निवास होना, शूद्र से शिक्षा लेना, ये काम प्रतापी तेजस्वी ब्राह्मण को भी पतित ब्रह्मतेज से हीन कर देते हैं ॥३३॥ जो द्विज शूद्री स्त्री से भोजन बनवाता हो और जिस के घर में शूद्री ही स्त्री हो वह द्विज पितर और देवताओं से वर्जित हुआ रौरव नरक को प्राप्त होता है ॥३४॥ मरण तथा जन्म के सूतक का अन्न खा २ के जिस का शरीर पुष्ट हुआ हो, और जो शूद्र के अन्न को खाता हो हम नहीं जानते कि वह ब्राह्मण किस २ योनि में जायगा ॥३५॥ परन्तु मनुजी ने ऐसा कहा है कि बारह जन्म तक गीध पक्षी, दश जन्म तक सूकर और सात जन्म तक कुत्ते की योनि में जन्म लेता है ॥ ३६ ॥ जो ब्राह्मण दक्षिणा के लिये शूद्र के हविष्य का होम करै वह ब्राह्मण तो जन्मान्तर में शूद्र होता और वह शूद्र ब्राह्मण कुलमें जन्मता है ॥३७॥ मौनव्रत को धारण करके जो ब्राह्मण बैठा हुआ न बोले और वह भोजन करता हुआ बोले उसके अन्न को त्याग देना चाहिये ॥ ३८ ॥

अर्द्धभुक्तेतुयोविप्रस्तस्मिन्पात्रेजलंपिबेत् ।
हतंदैवंचपित्र्यंच आत्मानंचोपघातयेत् ॥ ३९ ॥
भुञ्जानेषुतुविप्रेषु योऽग्रेपात्रंविमुञ्चति ।
समूढःसचपापिष्ठो ब्रह्मघ्नःसखलूच्यते ॥ ४० ॥
भाजनेषुचतिष्ठत्सु स्वस्तिकुर्वन्तियेद्विजाः ।
नदेवास्तृप्तिमायान्ति निराशाःपितरस्तथा ॥ ४१ ॥
अस्नात्वावैनभुञ्जीत द्विजश्चाग्निमपूज्यच ।
नपर्णपृष्ठेभुञ्जीत रात्रौदीपंविनातथा ॥ ४२ ॥
गृहस्थस्तुदयायुक्तो धर्ममेवानुचिन्तयेत् ।
पोष्यवर्गार्थसिद्ध्यर्थं न्यायवर्तीसबुद्धिमान् ॥ ४३ ॥
न्यायोपार्जितवित्तेन कर्त्तव्यंह्यात्मरक्षणम् ।
अन्यायेनतुयोजीवे-त्सर्वकर्मवहिष्कृतः ॥ ४४ ॥

आधा भोजन किये पीछे जो ब्राह्मण उसी भोजन के पात्र में जल पीवे उसके देवताओं और पितरों का कर्म नष्ट होता और यह अपने को भी नष्ट करता है ॥ ३९ ॥ पांतिमें ब्राह्मणों के भोजन करते हुए जो पहिले पात्र को छोड़ देता है वह मूढ़ बड़ा पापी और ब्रह्महत्यारा कहाता है ॥ ४० ॥ भोजन पात्रों (पत्तलों) के उठानेसे पहिले जो ब्राह्मण स्वस्ति (कल्याण हो) कहते हैं उस ब्रह्मभोज पर देवता तृप्त नहीं होते और पितर भी निराश हो के लौट जाते हैं ॥ ४१ ॥ विशेष कर ब्राह्मण को चाहिये कि—स्नान किये विना और अग्नि को पूजे विना भोजन न करै पत्तों की पीठ (उलटी पत्तल) पर और रात्रि में दीपक के जलाये विना अंधेरे में भोजन न करे ॥ ४२ ॥ दया युक्त हुआ गृहस्थ पुरुष धर्म की ही चिन्ता करे। अपने पोष्यवर्ग (पुत्र वा भृत्य आदि) के निर्वाह की सिद्धि के लिये बुद्धिमान् सदैव न्याय से अन्न धनादि का संचय करे ॥ ४३ ॥ न्याय के साथ धर्मानुकूल संचय किये धन से अपनी रक्षा करे। क्योंकि जो पुरुष अधर्म अन्याय से जीविका करता है वह सब कर्म धर्मों से बाहर (अनधिकारी) हो जाता है ॥ ४४ ॥ चयन यज्ञ करने वाला, कपिला गौ, सत्रयज्ञ करनेवाला,

अग्निचित्कपिलासत्री राजाभिक्षुर्महोदधिः ।
दृष्टमात्राःपुनन्त्येते तस्मात्पश्येत्तुनित्यशः ॥ ४५ ॥
अरणिंकृष्णमार्जारं चन्दनंसुमणिंघृतम् ।
तिलान्कृष्णाजिनं छागंगृहेचैतानिरक्षयेत् ॥ ४६ ॥
गवांशतंसैकवृषं यत्रतिष्ठत्ययन्त्रितम् ।
तत्क्षेत्रंदशगुणितं गोचर्मपरिकीर्तितम् ॥ ४७ ॥
ब्रह्महत्यादिभिर्मर्त्यो मनोवाक्कायकर्मभिः ।
एतद्गोचर्मदानेन मुच्यतेसर्वकिल्विषैः ॥ ४८ ॥
कुटुम्बिनेदरिद्राय श्रोत्रियायविशेषतः ।
यद्दानंदीयतेतस्मै तद्दानंशुभकारकम् ॥ ४९ ॥
वापीकूपतडागाद्यै-र्वाजपेयशतैर्मखैः ।
गवांकोटिप्रदानेन भूमिहर्तानशुद्ध्यति ॥ ५० ॥
आषोडशदिनादर्वाक् स्नानमेवरजस्वला ।
अतऊर्ध्वंत्रिरात्रंस्यादुशनामुनिरब्रवीत् ॥ ५१ ॥

राजा, भिक्षु, (संन्यासी) समुद्र, ये सब दर्शन से ही दर्शन कर्त्ता को पवित्र कर देते हैं। तिससे इन का नित्य दर्शन करे ॥ ४५ ॥ अरणि, काला बिलाव, चन्दन, उत्तम मणि, घी, तिल, काला मृगचर्म, बकरा, इन को घर में रक्खा करे ॥ ४६ ॥ जितनी जगह में सौ गौ और एक बैल बिना बांधे खड़े हो सकें उससे दशगुणी जगह भूमि को गोचर्म कहते हैं ॥ ४७ ॥ इस गोचर्ममात्र भूमिके दान से मनुष्य मन, वाणी, और शरीर से किये ब्रह्महत्या आदि पापों से छूट जाता है ॥ ४८ ॥ जो ब्राह्मणकुटुम्ब वाला हो, दरिद्र हो, और विशेष कर वेदपाठी हो, उसको जो दान दिया जाता है वही दान उस दाता के लिये शुभ करने वाला होता है ॥ ४६ ॥ दी हुई भूमि को हर लेने वाला मनुष्य बावड़ी, कूप, तालाब आदि के धर्मार्थ बनवाने से, सौ १०० वाजपेय यज्ञोंके करने से, और कोटि गौओंका दान देनेसे भी शुद्ध नहीं हो सकता ॥५०॥ यदि रजोदर्शन से सोलह दिन के बीच कोई स्त्री फिर से रजस्वला हो तो स्नान ही से शुद्ध हो जाती हैं। सोलहवें दिन के बाद रजोधर्म हो तो तीन दिन में शुद्धि होगी यह उशना मुनि ने कहा है ॥ ५१ ॥ जानकर चाण्डाल के छूनेपर

युगंयुगद्वयंचैव त्रियुगंचचतुर्युगम् ।
चाण्डालसूतिकोदक्या पतितानामधःक्रमात् ॥ ५२ ॥
ततःसन्निधिमात्रेण सचैलंस्नानमाचरेत् ।
स्नात्वावलोकयेत्सूर्यमज्ञानात्स्पृशतेयदि ॥ ५३ ॥
वापीकूपतड़ागेषु ब्राह्मणेज्ञानदुर्बलः ।
तोयंपिबतिववत्रेण श्वयोनौजायतेध्रुवम् ॥ ५४ ॥
यस्तुक्रुद्धःपुमान्भार्य्यां प्रतिज्ञाप्याप्यगम्यताम् ।
पुनरिच्छतितांगन्तुं विप्रमध्येतुश्रावयेत् ॥ ५५ ॥
श्रान्तःक्रुद्धस्तमोऽन्धोवा क्षुत्पिपासाभयार्दितः ।
दानपुण्यमकृत्वावा प्रायश्चित्तंदिनत्रयम् ॥ ५६ ॥
उपस्पृशेत्रिषवणं महानद्युपसंगमे ।
चीर्णान्तेचैवगांदद्याद् ब्राह्मणान्भोजयेद्दश ॥ ५७ ॥
दुराचारस्यविप्रस्य निषिद्धाचरणस्यच :
अन्नंभुक्त्वाद्विजःकुर्या-द्दिनमेकमभोजनम् ॥ ५८ ॥

दो दिन में, सूतिका स्त्री के छूने पर चार दिनमें, रजस्वला के छूने पर छः दिन में, और पतित स्त्रोके छूने पर आठ दिनमें शुद्ध होताहै ॥५२॥ चाण्डालादि के समीप बैठे तो सचैल स्नान करै । यदि अज्ञान से चाण्डालादि को छू लेवे तो स्नान करके सूर्य नारायण का दर्शन करै ॥ ५३ ॥ हाथों के विद्यमान रहते भी जो अज्ञानी ब्राह्मण बावड़ी कुआ वा तालाव में मुख लगाकर जल पीता है वह निश्चय करके जन्मान्तर में कुत्ता होता है ॥ ५४ ॥ जो मनुष्य क्रुद्ध होके अपनी स्त्री से प्रतिज्ञा करे कि तू दूषित होने से गमन करने योग्य नहीं है और फिर उस स्त्री का संग करना चाहे तो इस बात को ब्राह्मणों की मण्डली वा सभा में सुना देवे ॥ ५५ ॥ जो थका हो, क्रोध करे, मादकद्रव्य खाने आदि से उन्मत्त, वेहोश मूर्छित हुआ हो, क्षुधा, प्यास वा भय से पीड़ित हो गया हो, यथा समय दान पुण्य न करे तो वह ब्राह्मण तीन दिन प्रायश्चित्त करै ॥ ५६ ॥ और गंगा आदि बड़ी नदियों के संगम में सायं, प्रातः, और मध्याह्न में तीन वार स्नान और आचमन करै । प्रायश्चित्त किये पीछे एक गोदान करै और दश ब्राह्मण जिमावे ॥ ५७ ॥ दुराचारी और निषिद्ध आचरण करने वाले ब्राह्मण का अन्न खा कर द्विज पुरुष एक दिन भोजन न करै ॥ ५८ ॥ उत्तम सदा-

सद्वाचारस्यविप्रस्य तथावेदान्तवेदिनः ।
भुक्त्वान्नंमुच्यतेपापा-दहोरात्रंतुवैनरः ॥ ५९ ॥
ऊर्ध्वोच्छिष्टमधोच्छिष्टमन्तरिक्षमृतौतथा ।
कृच्छ्रत्रयंप्रकुर्वीत अशौचमरणेतथा ॥ ६० ॥
कृच्छ्रं दैव्ययुतंचैव प्राणायामशतद्वयम् ।
पुण्यतीर्थेह्यार्द्रशिराः स्नानंद्वादशसंख्यया ।
द्वियोजनंतीर्थयात्रा कृच्छ्रमेकंप्रकल्पितम् ॥ ६१ ॥
गृहस्थःकामतःकुर्याद्रेतसःसेचनंभुवि ।
सहस्रंतुजपेद्देव्याः प्राणायामैस्त्रिभिःसह ॥ ६२ ॥
चातुर्वेद्योपपन्नस्तु विधिवद्ब्रह्मघातके ।
समुद्रसेतुगमनं प्रायश्चित्तंसमादिशेत् ॥ ६३ ॥
सेतुबन्धपथेभिक्षां चातुर्वर्ण्यात्समाचरेत् ।
वर्जयित्वाविकर्मस्थान् छत्रोपानद्विवर्जितः ॥ ६४ ॥

चारी और वेदान्त को जानने वाले ब्राह्मणका अन्न खाकर मनुष्य एक दिन रात में अनेक पापों से छूट जाता है ॥ ५६ ॥ नाभि से ऊपर उच्छिष्ट होने वा नाभि से नीचे के भाग में अशुद्ध होने की दशा में कोई मरे, वा खटिया पर मरे, अथवा जो सूतक में मरे, उस के लिये पुत्रादि दायी लोग शुद्धि के बाद तीन कृच्छ्र व्रत करें ॥ ६० ॥ दश हजार गायत्री का जप, दोसौ २०० प्राणायाम, और पवित्र तीर्थ में बारह बार शिर भिगो २ कर स्नान करे ये सब एक कृच्छ्र का फल देते हैं। इस कारण कृच्छ्र व्रत करने में असमर्थ हो तो उक्त गायत्री जपादि को तिगुणा करे। और दो योजन तक तीर्थयात्रा को भी एक कृच्छ्र माना है ॥ ६१ ॥ यदि गृहस्थ पुरुष जानकर अपने वीर्य को भूमि पर गिरावे तो वह तीन प्राणायाम के साथ एक हजार गायत्री का जप करे ॥ ६२ ॥ विधिपूर्वक जिसने चारों वेद पढ़े जाने हों वह यदि ब्रह्महत्या करै तो सेतुबंध रामेश्वर पर जाना प्रायश्चित्त बतावे ॥ ६३ ॥ और वह प्रायश्चित्ती जूता और छाता का धारण न करके सेतुबन्ध के मार्ग में हिंसा चोरी व्यभिचारादि दुष्कर्मियों को छोड़ के शेष चारों वर्णों से भिक्षा मांगता खाता जावे ॥ ६४ ॥ वह भिक्षा मांगते

अहंदुष्कृतकर्मावै महापातककारकः ।
गृहद्वारेषुतिष्ठामि भिक्षार्थीब्रह्मघातकः ॥ ६५ ॥
गोकुलेषुवसेच्चैव ग्रामेषुनगरेषुच ।
तपोवनेषुतीर्थेषु नदीप्रस्रवणेषुच ॥ ६६ ॥
एतेषुख्यापयन्नेनः पुण्यंगत्वातुसागरम् ।
दशयोजनविस्तीर्णं शतयोजनमायतम् ॥ ६७ ॥
रामचन्द्रसमादिष्टं नलसंचयसंचितम् ।
सेतुंदृष्ट्वासमुद्रस्य ब्रह्महत्यांव्यपोहति ।
सेतुंदृष्ट्वाविशुद्धात्मा त्ववगाहेतसागरम् ॥ ६८ ॥
यजेतवाश्वमेधेन राजातुपृथिवीपतिः ।
पुनःप्रत्यागतोवेश्म वासार्थमुपसर्पति ॥ ६९ ॥
सपुत्रःसहभृत्यश्च कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ।
गाश्चैवैकशतंदद्याच्चातुर्विद्येषुदक्षिणाम् ॥ ७० ॥

समय ऐसे कहा करे कि "मैं खोटा कर्म करने वाला और महापातक करने वाला हूं। मुझे ब्रह्महत्या लगी है भिक्षा के लिये आपके द्वारे पर खड़ा हूं" ॥ ६५ ॥ ग्राम वा नगरों की गोशाला धर्मशालादि में रात को वसे। तपो वनों में, तीर्थों के नदी के सोताओं पर ॥ ६६ ॥ इन सब स्थानों में अपने पाप को प्रकट करता हुआ दश योजन चौड़े और सौ योजन लम्बे पवित्र समुद्र पर जाके ॥ ६७ ॥ महाराजा भगवान् रामचन्द्र जी की आज्ञा से नलवानर के बनाये हुए समुद्र के सेतु को देखकर ब्रह्महत्या को दूर करता है। सेतुके दर्शन करके विशुद्ध मन हुआ सागरमें स्नान करै ॥६८॥ और पृथ्वी का पति राजा ब्रह्महत्या करै तो अश्वमेध यज्ञ करै। फिर तीर्थ यात्री लौट कर घर में वसने के लिये आवे ॥ ६९ ॥ तब पुत्र और भृत्यों सहित ब्राह्मणों को जिमावे और चारों वेदों को पढ़ने जानने वाले ब्राह्मणों को सौ १०० गौ दक्षिणा में देवे ॥ ७० ॥ तब ब्राह्मणों को प्रसन्न सन्तुष्ट करने से ब्रह्महत्या से छूट जाता है।

ब्राह्मणानांप्रसादेन ब्रह्महातुविमुच्यते ।
विन्ध्यादुत्तरतोयस्य संवासःपरिकीर्त्तितः ॥ ७१ ॥
पराशरमतंतस्य सेतुबन्धस्यदर्शनात् ।
सवनस्थांस्त्रियंहत्वा ब्रह्महत्याव्रतंचरेत् ॥ ७२ ॥
सुरापश्चद्विजःकुर्या-न्नदींगत्वासमुद्रगाम् ।
चान्द्रायणेततश्चीर्णे कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ॥ ७३ ॥
अनडुत्सहितांगांच दद्याद्विप्रेषुदक्षिणाम् ॥ ७४ ॥
सुरापानंसकृत्कृत्वा अग्निवर्णांसुरांपिबेत् ।
सपावयेदिहात्मानमिहलोकेपरत्रच ॥ ७५ ॥
अपहृत्यसुवर्णंतु ब्राह्मणस्यततःस्वयम् ।
गच्छेन्मुशलमादाय राजानंस्ववधायतु ॥ ७६ ॥
हतःशुद्धिमवाप्नोति राज्ञाऽसौमुक्तएवच ।
कामतस्तुकृतंयत्स्यान्नान्यथावधमर्हति ॥ ७७ ॥

विन्ध्याचल पर्वतसे उत्तर जो वसता है ॥ ७१ ॥ उस के लिये पाराशर ऋषि ने सेतुबन्धु का दर्शन कहा है । जिस के शीघ्र सन्तान होने वाला हो ऐसी स्त्री को मार डाले तो ब्रह्महत्या का व्रत करे ॥ ७२ ॥ मदिरा पीने वाला ब्राह्मण समुद्र तक जाने वाली नदी पर जाके चान्द्रायण व्रत करे फिर व्रत के पूरे होने पर ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ ७३ ॥ एक बैल सहित एक गौ ब्राह्मणों को दक्षिणा देवे ॥ ७४ ॥ अथवा जो शुद्ध ब्राह्मण एक वार भी मदिरा को पीवे वह अग्नि वर्ण (अत्यन्त उष्ण) मदिरा पीकर प्राण त्याग करे तो इस लोक और परलोक में अपने को पवित्र कर लेता है ॥७५॥ ब्राह्मण के सुवर्ण को चुराकर आप ही मूसल को हाथ में लेके अपने वध के लिये राजा के समीप जाय ॥ ७६ ॥ तब यदि राजा मरवा डाले वा उचित समझ के छोड़ देवे तो भी दोनों हालत में पाप से छूट जाता है । यदि जान कर चोरी की हो तो मारने के योग्य है अन्यथा वध करने योग्य नहीं है ॥ ७७ ॥ एक जगह बैठने, लेटने, एक सवारी में बैठ कर चलने, पास २ बैठ कर वार्त्तालाप करने और साथ २

आसनाच्छयनाद्यानात्संभाषात्सहभोजनात् ।
संक्रामन्तीहपापानि तैलविन्दुरिवाम्भसि ॥ ७८ ॥
चान्द्रायणंयावकंच तुलापुरुषएवच ।
गवांचैवानुगमनं सर्वपापप्रणाशनम् ॥ ७९ ॥
एतत्पाराशरंशास्त्रं श्लोकानांशतपञ्चकम् ।
द्विनवत्यासमायुक्तं धर्मशास्त्रस्यसंग्रहः ॥ ८० ॥
यथाध्ययनकर्माणि धर्मशास्त्रमिदंतथा ।
अध्येतव्यंप्रयत्नेन नियतंस्वर्गकामिना ॥ ८१ ॥

इति श्रीपाराशरीये धर्म्मशास्त्रे सकलप्रायश्चित्त
निर्णयो नाम द्वादशोऽध्यायः समाप्तः
समाप्ता च पाराशरसंहिता ॥

बैठ कर भोजन करने से पापियों के पाप अच्छे लोगों को लगते हैं कि जैसे जल में तेल का विन्दु फैलजाता है ॥ ७८ ॥ चान्द्रायण, यावक (जौ को ही खाना,) और तुला पुरुष-तुलादान करना, गौओं के पीछे गमन करना, अर्थात् तन मन धन से गोरक्षा में तत्पर होना ये काम सब पापों को नाश करने वाले हैं ॥ ७९ ॥ यह पाराशर ऋषिका कहा धर्म शास्त्र जिसमें पांचसौ वानवे ५९२ श्लोक हैं । सो यह धर्म शास्त्रका संक्षेप से संग्रह किया है ॥ ८० ॥ जैसे वेदके अध्ययन सम्बन्धी कर्म पुण्योत्पादक हैं वैसा ही यह धर्मशास्त्र है इस लिये स्वर्ग की इच्छा रखने वाले पुरुष को यह धर्म शास्त्र यत्न से पढ़ना चाहिये ॥ ८१ ॥

यह पाराशरीय धर्मशास्त्रके ब्राह्मणसर्वस्व सम्पादक पं भीमसेन शर्माकृत भाषानुवाद में समस्त प्रायश्चित्त निर्णय नामक वारहवां १२ अध्याय पूरा हुआ ॥

॥ समाप्त ॥